

يَأْتِيهَا الَّذِينَ ءَامَنُوا اسْتَعِينُوا بِالصَّبْرِ وَالصَّلَاةِ إِنَّ اللَّهَ مَعَ  
 الصَّابِرِينَ ﴿١٥٣﴾ وَلَا تَقُولُوا لِمَنْ يُقْتَلُ فِي سَبِيلِ اللَّهِ أَمُوتَ  
 بَلْ أَحْيَاءٌ وَلَكِنْ لَا تَشْعُرُونَ ﴿١٥٤﴾ وَلَنَبْلُوَنَّكُمْ بِشَيْءٍ مِّنَ  
 الْخَوْفِ وَالْجُوعِ وَنَقْصٍ مِّنَ الْأَمْوَالِ وَالْأَنْفُسِ وَالثَّمَرَاتِ ۗ  
 وَبَشِّرِ الصَّابِرِينَ ﴿١٥٥﴾ الَّذِينَ إِذَا أَصَابَتْهُمُ مُصِيبَةٌ قَالُوا إِنَّا لِلَّهِ  
 وَإِنَّا إِلَيْهِ رَاجِعُونَ ﴿١٥٦﴾ أُولَٰئِكَ عَلَيْهِمْ صَلَوَاتٌ مِّن رَّبِّهِمْ  
 وَرَحْمَةٌ وَأُولَٰئِكَ هُمُ الْمُهْتَدُونَ ﴿١٥٧﴾ \* إِنَّ الصَّفَا وَالْمَرْوَةَ مِن  
 شَعَابِرِ اللَّهِ فَمَنْ حَجَّ الْبَيْتَ أَوْ اعْتَمَرَ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِ أَنْ  
 يَطَّوَّفَ بِهِمَا وَمَن تَطَوَّعَ خَيْرًا فَإِنَّ اللَّهَ شَاكِرٌ عَلِيمٌ ﴿١٥٨﴾ إِنَّ  
 الَّذِينَ يَكْتُمُونَ مَا أَنزَلْنَا مِنَ الْبَيِّنَاتِ وَالْهُدَىٰ مِن بَعْدِ  
 مَا بَيَّنَّهٖ لِلنَّاسِ فِي الْكِتَابِ أُولَٰئِكَ يَلْعَنُهُمُ اللَّهُ وَيَلْعَنُهُمُ  
 اللَّعِينُونَ ﴿١٥٩﴾ إِلَّا الَّذِينَ تَابُوا وَأَصْلَحُوا وَبَيَّنَّوْا فَاُولَٰئِكَ  
 أَتُوبُ عَلَيْهِمْ وَأَنَا التَّوَّابُ الرَّحِيمُ ﴿١٦٠﴾ إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا  
 وَمَاتُوا وَهُمْ كُفَّارٌ أُولَٰئِكَ عَلَيْهِمْ لَعْنَةُ اللَّهِ وَالْمَلَائِكَةِ  
 وَالنَّاسِ أَجْمَعِينَ ﴿١٦١﴾ خَالِدِينَ فِيهَا لَا يُخَفَّفُ عَنْهُمْ الْعَذَابُ  
 وَلَا هُمْ يُنظَرُونَ ﴿١٦٢﴾ وَإِلَهُكُمْ إِلَهُ وَاحِدٌ ۖ لَا إِلَهَ إِلَّا هُوَ  
 الرَّحْمَنُ الرَّحِيمُ ﴿١٦٣﴾

### Theme

Prescription to seek Allah's  
 help. Martyrs are not dead.

अल्लाह से मदद तलब करने की

<p>Allah will test the Believer's belief with sufferings. Safa and Marwah are the symbols of Allah. The curse of Allah, the angels and all mankind are on those who conceal the truth.</p>	<p>हिदायत। शुहदा मुर्दा नहीं हैं। अल्लाह मोमिनो के ईमान को मुसीबतो के जरिये आजमाएगा। सफ़ा और मरवा अल्लाह की निशानियाँ हैं। जो लोग हक़ को छुपाते हैं उन पर अल्लाह, फ़रिशतो और तमाम इंसानो की लानत है।</p>
--	--

**Tarjumani**

<p>O' You who believe! Seek My help with patience and prayer: surely, Allah is with those who are patient. Do not say about those who are slain in the cause of Allah (martyrs), that they are dead. Nay, they are alive, but you do not perceive it. We shall surely test your steadfastness with fear and famine, with loss of property, life and produce. Give good news to those who endure with patience; who, when afflicted with calamity, say: "We belong to Allah and to Him we shall return. Such are the people on whom there are blessings and Mercy from Allah; and they are the ones that are rightly guided. Behold! Safa and Marwa (two</p>	<p>ऐ लोगो जो ईमान लाए हो, सब्र और नमाज़ से मदद लो   अल्लाह सब्र करनेवालो के साथ है   और जो लोग अल्लाह की राह में मारे जाएँ, उन्हें मुर्दा न कहो, ऐसे लोगो तो हक़ीकत में ज़िन्दा हैं, मगर तुम्हें उनकी ज़िन्दगी का शुऊर नहीं होता   और हम ज़रूर तुम्हें खौफ़ व खतर, फ़ाकाकशी, जान व माल के नुकसानात और आमदनियो के घाटे में मुब्तला करके तुम्हारी आजमाइश करेंगे   इन हालात में जो लोग सब्र करें और जब कोई मुसीबत पड़े तो कहें कि "हम अल्लाह ही के हैं और अल्लाह ही की तरफ़ हमें पलटकर जाना है", उन्हें खुशखबरी दे दो   उनपर उनके रब की तरफ़ से बड़ी इनायात होंगा, उसकी रहमत उनपर साया करेगी और ऐसे ही लोग रास्तरौ हैं   यक़ीनन सफ़ा और मरवा अल्लाह</p>
---	--

<p>hills in Al-Masjid Al-Haram) are among the symbols of Allah. So anyone who performs Hajj (obligatory pilgrimage to Makkah) or Umrah (optional visit to Makkah) to the House, there is no blame if one goes around (perform s'ayy) between them; and anyone who does good voluntarily should know that surely, Allah is Appreciative, All-Knower. Those who conceal the clear proofs and the guidance that We have revealed, after We have made it clear in the Book for mankind, will have Allah's curse and that of those who are entitled to curse: except those who repent, reform and let the truth be known; I will accept their repentance, for I am the Receiver of Repentance, the Merciful. Surely, those who are unbelievers and die while they are unbelievers, they are the ones on whom is the curse of Allah, the angels and all mankind, they will live in it for ever; neither their punishment</p>	<p>की निशानियों में से हैं   लिहाज़ा जो शख्स बैतुल्लाह का हज या उमरा करे, उसके लिए कोई गुनाह की बात नहीं कि वह इन दोनों पहाड़ियों के दरमियान सई कर ले और जो ब-रिज़ा व रगबत कोई भलाई का काम करेगा, अल्लाह को उसका इल्म है और वह उसकी कद्र करनेवाला है   जो लोग हमारी नाज़िल की हुई रौशन तालीमात और हिदायात को छिपाते हैं, दरआँ-हाले कि हम उन्हें सब इनसानों की रहनुमाई के लिए अपनी किताब में बयान कर चुके हैं, यकीन जानो कि अल्लाह भी उनपर लानत करता है और तमाम लानत करनेवाले भी उनपर लानत भेजते हैं   अलबत्ता जो इस रविश से बाज़ आ जाएँ और अपने तर्ज़े-अमल की इस्लाह कर लें और जो कुछ छिपाते थे, उसे बयान करने लगें, उनको मैं माफ़ कर दूँगा, और मैं बड़ा दरगुज़र करनेवाला और रहम करनेवाला हूँ   जिन लोगों ने कुफ़्र का रवैया इखतियार किया और कुफ़्र की हालत ही जान दी, उनपर अल्लाह और फरिश्तों और तमाम इनसानों की लानत है   इसी लानतज़दगी की हालत में वे हमेशा रहेंगे, न उनकी सज़ा में तखफिफ होगी और न उन्हें फिर कोई दूसरी</p>
--	---

<p>shall be lightened nor shall they be given respite. Your God is one God; there is no one worthy of worship except Him, the Com-passionate, the Merciful.</p>	<p>मुहलत दी जाएगी   तुम्हारा खुदा एक ही खुदा है, उस रहमान और रहीम के सिवा कोई और खुदा नहीं है  </p>
<p><b>Tafsir</b></p>	
<p><b>You who believe! seek help in steadfastness and the prayer. Allah is with the steadfast. [2:153]</b></p>	<p><b>ऐ ईमान वालो! सब्र और नमाज़ के ज़रिये मदद तलब करो। बेशक अल्लाह सब्र करने वालों के साथ है। [2:153]</b></p>
<p><b>Do not say that those who are killed in the Way of Allah are dead. On the contrary, they are alive but you are not aware of it. [2:154]</b></p>	<p><b>यह न कहो कि जो लोग अल्लाह की राह में क़त्ल किए जाएँ वे मुर्दा हैं। बल्कि हक़ीक़त यह है कि वे ज़िंदा हैं, लेकिन तुम्हें इसका शऊर नहीं। [2:154]</b></p>
<p>This is like another verse: ‘Do not suppose those killed in the Way of Allah are dead. No indeed! They are alive and well provided for in the very presence of their Lord.’ (3:169) There we will discuss martyrs and the rulings that apply in their case, Allah willing. Allah will bring them to life after death in order to provide for them and so it is equally</p>	<p>यह एक दूसरी आयत की तरह है: “यह गुमान न करो कि जो लोग अल्लाह की राह में क़त्ल किए गए वे मुर्दा हैं। हरगिज़ नहीं! वे ज़िंदा हैं और अपने रब के हज़ूर रिज़क़ दिए जा रहे हैं।” (3:169) वहाँ हम शुहदा और उनके बारे में लागू होने वाले अहकाम का ज़िक्र करेंगे, अगर अल्लाह ने चाहा। अल्लाह उन्हें मौत के बाद ज़िंदा करता है ताकि उन्हें रिज़क़ दे, और इसी तरह यह भी मुमकिन है कि</p>

<p>possible for the unbelievers to be brought to life in order for them to be punished. This is evidence for the punishment in the grave. The martyrs are alive, as Allah says. It does not mean that they will be brought to life later, since in that case there would be no difference between them and anyone else, because everyone will be brought back to life on the Last Day. The evidence for this is found in His words: ‘...but you are not aware of it’, and the believers are certainly aware that they will be brought back to life.</p>	<p>काफ़िरोँ को जिंदा किया जाए ताकि उन्हें अज़ाब दिया जाए। यह क़ब्र के अज़ाब पर दलील है। शुहदा जिंदा हैं, जैसा कि अल्लाह ने फ़रमाया है। इसका मतलब यह नहीं कि उन्हें बाद में जिंदा किया जाएगा, क्योंकि अगर ऐसा होता तो उनमें और दूसरे लोगों में कोई फ़र्क़ न रहता, इसलिए कि क्रियामत के दिन तो हर शख्स को दोबारा जिंदा किया जाएगा। इसकी दलील अल्लाह के इस फ़रमान में है: “...लेकिन तुम्हें इसका शऊर नहीं”, हालाँकि मोमिन तो यक़ीनन जानते हैं कि उन्हें दोबारा जिंदा किया जाएगा।</p>
<p><b>We will test you with a certain amount of fear and hunger and loss of wealth and life and fruits. But give good news to the steadfast: [2:155]</b></p>	<p><b>और हम तुम्हें ज़रूर आजमाएँगे कुछ ख़ौफ़, भूख, माल के नुक़सान, जानों के नुक़सान और फलों की कमी के ज़रिये। और सब करने वालों को खुशख़बरी दे दो। [2:155]</b></p>
<p><b>We will test you with a certain amount of fear and hunger and loss of wealth and life and fruits.</b></p>	<p><b>और हम तुम्हें ज़रूर आजमाएँगे कुछ ख़ौफ़, भूख, माल के नुक़सान, जानों के नुक़सान और फलों की कमी के ज़रिये।</b></p>
<p>‘We will test you so that We</p>	<p>“हम तुम्हें आजमाएँगे ताकि हमें</p>



<p>know who are the fighters and the steadfast by direct evidence in order that they may be rewarded.’ It is said that they will be tested as a sign for those after them and so that they know that if they too are steadfast in this respect, then truth will be clear to them. It is said that He will inform them of this so that they will have certainty that it will befall them as well; then they will be ready for it and will be less likely to be anxious. It advances Allah’s reward.</p>	<p>मालूम हो जाए कि तुम में कौन जिहाद करने वाले और सब्र करने वाले हैं, और यह सीधे सबूत के साथ ज़ाहिर हो जाए ताकि उन्हें इसका अज़्र दिया जाए।” यह भी कहा गया है कि उन्हें इसलिए आजमाया जाएगा ताकि बाद में आने वालों के लिए यह एक निशानी बन जाए, और वे जान लें कि अगर वे भी इस मामले में सब्र करेंगे तो हक़ उन पर वाज़ेह हो जाएगा। यह भी कहा गया है कि अल्लाह उन्हें इसकी ख़बर इसलिए देता है ताकि उन्हें यक़ीन हो जाए कि यह आजमाइश उन पर भी आएगी; फिर वे उसके लिए तैयार रहेंगे और कम घबराएँगे। इस तरह अल्लाह के अज़्र-ओ-सवाब की उम्मीद और रज़ाबत बढ़ती है।</p>
<p>‘Certain amount’ (shay’) is in the singular, but has the meaning of a plural. Indeed, ad-Dahhāk actually recites it in the plural although most have it in the singular. The word ‘fear’ here refers to fear of the enemy and alarm when fighting as Ibn ‘Abbās said. Ash-Shāfi‘ī said that it is fear of Allah that is meant. The ‘hunger’ is that</p>	<p>“थोड़ा सा” (शै) शब्द एकवचन के रूप में है, लेकिन इसका अर्थ बहुवचन का है। वास्तव में दहहाक इसे बहुवचन के रूप में पढ़ते हैं, हालांकि अधिकांश कुर्रा इसे एकवचन ही पढ़ते हैं। यहाँ “खौफ़” से मुराद दुश्मन का डर और लड़ाई के समय की घबराहट है, जैसा कि इब्न अब्बास ने कहा। जबकि इमाम शाफ़ई के नज़दीक इससे मुराद</p>



<p>caused by drought and famine according to Ibn ‘Abbās. Ash-Shāfi‘ī said that it refers to the hunger felt in the month of Ramaḍān. ‘Loss of wealth’ comes through being occupied with fighting the unbelievers. It is said that it refers to damage done to crops. Ash-Shāfi‘ī said that it is the diminishment that comes about through the payment of the obligatory zakat. ‘Loss of life’, according to Ibn ‘Abbās, is by killing and death in jihād. Ash-Shāfi‘ī said that it is through illnesses. ‘Loss of fruits’, according to ash-Shāfi‘ī means the death of children as they are the fruit of a man’s heart as we find in a tradition. Ibn ‘Abbās says that it means loss of crops and blessing.</p>	<p>अल्लाह का ख़ौफ़ है। “भूख” से मुराद इब्र अब्बास के अनुसार क़हत और सूखे के कारण पैदा होने वाली भूख है। इमाम शाफ़ई के अनुसार इससे मुराद रमज़ान के महीने में महसूस होने वाली भूख है। “माल का नुक़सान” काफ़िरों से जंग में मशगूल रहने के कारण होता है। यह भी कहा गया है कि इससे मुराद खेती को पहुँचने वाला नुक़सान है। इमाम शाफ़ई के अनुसार इससे मुराद वह कमी है जो फ़र्ज़ ज़कात अदा करने से आती है। “जानों का नुक़सान” इब्र अब्बास के अनुसार जिहाद में क़त्ल और मौत के ज़रिये होता है। इमाम शाफ़ई के अनुसार इससे मुराद बीमारियों के ज़रिये होने वाली मौतें हैं। “फलों का नुक़सान” इमाम शाफ़ई के अनुसार औलाद की मौत है, क्योंकि एक रिवायत में आया है कि औलाद इंसान के दिल का फल होती है। जबकि इब्र अब्बास के अनुसार इससे मुराद फ़सलों और बरकत का कम हो जाना है।</p>
<p><b>But give good news to the steadfast:</b></p>	<p><b>और सब्र करने वालों को खुशख़बरी दे दो।</b></p>
<p>Give them the good news of the reward for their</p>	<p>उन्हें उनके सब्र के बदले मिलने वाले अज़्र की खुशख़बरी दे दो। शब्द</p>

<p>steadfastness. The root of the word ‘steadfast’ (ṣabr) means to confine and restrict and its reward is without limit, but that only refers to steadfastness at the first blow. Al-Bukhārī transmitted from Anas that the Prophet ﷺ said, ‘Steadfastness is at the first blow.’ Muslim transmitted it in a more complete form. The steadfastness which is difficult for the self and which has such an immense reward is that shown when the affliction first strikes since it indicates the strength of the heart and its firmness in the station of steadfastness. When an affliction lessens with time anyone can be steadfast. That is why it is said, ‘In an affliction every intelligent person must withstand what a fool can only withstand after three.’ Sahl ibn ‘Abdullāh at-Tustarī said, ‘When the Almighty said: “give good news to the steadfast”, steadfastness became a way of life.’</p>	<p>“सब्र” (ṣabr) की जड़ के मानी रोकने और क़ाबू में रखने के हैं। इसका अज़्र बेहिसाब है, लेकिन यह ख़ास तौर पर उस सब्र के बारे में है जो मुसीबत के पहले सदमे पर किया जाए। इमाम बुख़ारी ने अनस से रिवायत किया है कि नबी ﷺ ने फ़रमाया: “सब्र तो पहले सदमे के वक़्त होता है।” इमाम मुस्लिम ने भी इसे ज़्यादा मुकम्मल रिवायत के साथ नक़ल किया है। वह सब्र जो नफ़्स पर भारी होता है और जिसका अज़्र बहुत अज़ीम है, वही है जो मुसीबत के पहली बार आने पर किया जाए, क्योंकि यह दिल की मज़बूती और मक़ाम-ए-सब्र में उसकी साबित-क़दमी को ज़ाहिर करता है। जब वक़्त के साथ मुसीबत की शिद्दत कम हो जाती है तो हर शख़्स सब्र कर सकता है। इसी लिए कहा जाता है: “मुसीबत में हर अक़्लमंद को वह बर्दाश्त करना चाहिए जिसे एक नादान सिर्फ़ तीन दिन बाद बर्दाश्त कर पाता है।” सहल बिन अब्दुल्लाह तुस्तरी ने कहा: “जब अल्लाह तआला ने फ़रमाया: ‘सब्र करने वालों को ख़ुशख़बरी दे दो’, तो सब्र एक तरीक़ा-ए-ज़िंदगी बन गया।”</p>
--	---

<p>There are two types of steadfastness: steadfastness in not disobeying Allah, and this is that of the mujāhid, and steadfastness in obeying Allah, and this is that of the ordinary worshipper. If someone is steadfast in not disobeying Allah and steadfast in obeying Allah, Allah will grant him complete satisfaction with His Decree. The sign of this satisfaction is tranquillity in the heart in the face of everything that happens to you, whether liked or disliked. Al-Khawwās said, ‘Steadfastness is firmness in holding to the rulings of the Book and Sunnah.’ Ruwaym said, ‘Steadfastness is abandoning complaint.’ Dhu-n-Nūn al-Miṣrī said, ‘Steadfastness is seeking the help of Allah Almighty.’</p>	<p>सब्र की दो किस्में हैं: एक यह कि इंसान अल्लाह की नाफ़रमानी से बचने में सब्र करे, और यह मुजाहिद का सब्र है; और दूसरी यह कि अल्लाह की इताअत में सब्र करे, और यह आम इबादतगुज़ार का सब्र है। अगर कोई शख्स अल्लाह की नाफ़रमानी से बचने में भी सब्र करे और उसकी इताअत में भी सब्र करे, तो अल्लाह उसे अपने फ़ैसले पर कामिल रज़ा अता फ़रमाता है। इस रज़ा की निशानी यह है कि इंसान के दिल में हर उस चीज़ के मुक़ाबले में सुकून हो जो उस पर पेश आए, चाहे वह उसे पसंद हो या नापसंद। अल-ख़व्वास ने कहा: “सब्र यह है कि किताब और सुन्नत के अहकाम पर मज़बूती से क़ायम रहा जाए।” रुवैम ने कहा: “सब्र शिकायत को छोड़ देने का नाम है।” जुन्नून मिस्री ने कहा: “सब्र यह है कि बंदा अल्लाह तआला से मदद तलब करे।”</p>
<p><b>Those who, when disaster strikes them, say, ‘We belong to Allah and to Him we will return. [2:156]</b></p>	<p><b>वे लोग कि जब उन पर कोई मुसीबत आती है तो कहते हैं: “बेशक हम अल्लाह ही के हैं और उसी की तरफ़ हमें लौट कर जाना है।” [2:156]</b></p>

<b>Those who, when disaster strikes them,</b>	<b>वे लोग कि जब उन पर कोई मुसीबत आती है</b>
<p>The word ‘disaster’ (muṣībah) means everything that harms and afflicts a believer, even if it is minor. It is used for any evil. ‘Ikrimah related that one night the lamp of the Messenger of Allah ﷺ went out and he said, ‘We belong to Allah and to Him we return.’ He was asked, ‘Is it a disaster, Messenger of Allah?’ He answered, ‘Yes, whatever harms a believer is a disaster.’ This idea is confirmed in the Ṣaḥīḥ. In Ṣaḥīḥ Muslim there is a ḥadīth transmitted from Abū Sa‘īd and Abū Hurayrah in which they heard the Messenger of Allah ﷺ say, ‘Whatever afflicts the believer, be it discomfort, fatigue, illness or sorrow, even a care that concerns him, expiates his evil deeds.’</p>	<p>“मुसीबत” (मुसीबत) का शब्द हर उस चीज़ के लिए इस्तेमाल होता है जो मोमिन को नुकसान पहुँचाए और उसे तकलीफ़ दे, चाहे वह मामूली ही क्यों न हो। यह हर किसम की बुराई के लिए बोला जाता है। इकरिमा रिवायत करते हैं कि एक रात रसूलुल्लाह ﷺ का चिराग़ बुझ गया तो आप ﷺ ने फ़रमाया: “इन्ना लिल्लाहि वा इन्ना इलैहि राजिऊन” (हम अल्लाह ही के हैं और उसी की तरफ़ लौटने वाले हैं)। आप ﷺ से पूछा गया: “ऐ अल्लाह के रसूल! क्या यह भी मुसीबत है?” आप ﷺ ने फ़रमाया: “हाँ, जो चीज़ भी मोमिन को तकलीफ़ दे वह मुसीबत है।” यह मफ़हूम सहीह अहादीस में भी साबित है। सहीह मुस्लिम में अबू सईद और अबू हुरैरा से रिवायत है कि उन्होंने रसूलुल्लाह ﷺ को यह फ़रमाते हुए सुना: “मोमिन को जो भी तकलीफ़ पहुँचती है—चाहे वह बेआरामी हो, थकान हो, बीमारी हो या ग़म—यहाँ तक कि कोई फ़िक्र जो उसे लगी रहे, यह सब उसके गुनाहों का कफ़ारा बन जाते हैं।”</p>

<p>Ibn Mājah in the <i>Sunan</i> transmitted from Abū Bakr ibn Abī Shaybah from Wakī‘ ibn Hishām ibn Ziyād from his mother from Fāṭimah bint al-Ḥusayn from her father that the Messenger of Allah ﷺ said, ‘If someone suffers an affliction and remembers his affliction and says, “We belong to Allah and to Him we will return,” even after a long time, Allah will write for him a reward the same as if he had said it on the day he was afflicted.’</p>	<p>इब्र माजह ने सुनन में अबू बक्र बिन अबी शैबह से रिवायत नक़ल की है, वे वकीअ से, वे हिशाम बिन ज़ियाद से, वे अपनी वालिदा से, वे फ़ातिमा बिनत अल-हुसैन से और वे अपने वालिद से रिवायत करती हैं कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया: “अगर किसी शख्स को कोई मुसीबत पहुँचे और वह अपनी उस मुसीबत को याद करे और कहे: ‘इन्ना लिल्लाहि वा इन्ना इलैहि राजिऊन’ (हम अल्लाह ही के हैं और उसी की तरफ़ लौटने वाले हैं), चाहे एक लंबी मुद्दत गुज़र जाने के बाद ही क्यों न हो, तो अल्लाह उसके लिए वही अज़्र लिख देता है जो उसे उस दिन मिलता जब उसने पहली बार उस मुसीबत पर ये कलिमात कहे थे।”</p>
<p>One of the worst afflictions is an affliction which affects one’s dīn. ‘Atā’ ibn Abī Rabāḥ reported that the Messenger of Allah ﷺ said, ‘When someone suffers an affliction, he should remember his loss of me. That is one of the greatest afflictions.’ Abū Muḥammad as-Samarqandī transmitted it in his <i>Musnad</i>. Abū Nu‘aym</p>	<p>सबसे बुरी मुसीबतों में से एक वह मुसीबत है जो इंसान के दीन को प्रभावित करे। अता बिन अबी रबाह रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया: “जब किसी शख्स पर कोई मुसीबत आए तो वह मेरी जुदाई को याद करे, क्योंकि यह सबसे बड़ी मुसीबतों में से एक है।” इस रिवायत को अबू मुहम्मद समरकंदी ने अपनी मुसन्नद में नक़ल किया है। अबू नुऐम ने</p>



<p>reported it from Faṭr and has a similar report which is <i>mursal</i> from Makhūl. Abū ‘Umar said, ‘The Messenger of Allah ﷺ spoke the truth because the affliction of losing him is greater than any other affliction which a Muslim might suffer after that until the Day of Rising. The Revelation has come to an end and Prophethood has died out. The first evil to appear was the apostasy of the Arabs. His death was the end of good and the beginning of loss. Abū Sa‘īd al-Khudrī said, ‘Our hands had not brushed off the dust of the grave of the Messenger of Allah when we found that we did not know our hearts.’</p>	<p>इसे फ़ित्र से रिवायत किया है और इसके मशाबेह एक रिवायत मखूल से मुरसल तौर पर भी नक़ल की गई है। अबू उमर ने कहा: "रसूलुल्लाह ﷺ ने सच फ़रमाया, क्योंकि आप ﷺ की जुदाई की मुसीबत हर उस मुसीबत से बड़ी है जो क्रियामत तक किसी मुसलमान पर आ सकती है। वही (वह) का सिलसिला ख़त्म हो गया और नुबूवत का दरवाज़ा बंद हो गया। पहली बुराई जो ज़ाहिर हुई वह अरबों का इर्तिदाद था। आप ﷺ की वफ़ात ख़ैर के ख़ात्मे और नुक़सान की शुरुआत की निशानी थी।" अबू सईद ख़ुदरी कहते हैं: "हमने अभी रसूलुल्लाह ﷺ की क़ब्र की मिट्टी अपने हाथों से झाड़ी भी न थी कि हमें महसूस हुआ कि हम अपने दिलों को पहचान नहीं रहे थे।"</p>
<p><b>We belong to Allah and to Him we will return.</b></p>	<p><b>बेशक हम अल्लाह ही के हैं और उसी की तरफ़ हमें लौट कर जाना है।</b></p>
<p>Allah has made these words the refuge of all those overcome by affliction and the resort of all those undergoing trial since it contains many blessed</p>	<p>अल्लाह तआला ने इन कलिमात को हर उस शख्स के लिए पनाहगाह बना दिया है जिसे मुसीबत ने घेर लिया हो और हर उस शख्स का सहारा बना</p>



<p>meanings. ‘We belong to Allah’ is <i>tawhīd</i>, and affirmation of our slavehood and Allah’s mastership; ‘...and to Him we will return’ is affirmation of the inevitability of death and resurrection from the grave and certainty that the entire affair will return to Allah as it belongs to Him. Sa‘īd ibn Jubayr said, ‘These words were not given to any Prophet before our Prophet. If Ya‘qūb had known them, he would not have said, “My sorrow for Yūsuf!” (12:84)’</p>	<p>दिया है जो आज़माइश से गुज़र रहा हो, क्योंकि इनमें बहुत सी बरकत वाली मआनी पाई जाती हैं। “हम अल्लाह ही के हैं” तौहीद का इज़हार है और इस बात का इक़रार है कि हम बंदे हैं और अल्लाह हमारा मालिक है। “...और उसी की तरफ़ हमें लौट कर जाना है” इस बात की तसदीक़ है कि मौत और क़ब्र से दोबारा उठाया जाना यक़ीनी है, और यह यक़ीन भी कि तमाम मामले आख़िरकार अल्लाह ही की तरफ़ लौटते हैं, क्योंकि सब कुछ उसी का है। सर्ईद बिन जुबैर ने कहा: “ये कलिमात हमारे नबी ﷺ से पहले किसी नबी को अता नहीं किए गए थे। अगर याक़ूब उन्हें जानते होते तो वे यह न कहते: ‘हाय मेरा यूसुफ़ पर ग़म!’ (12:84)”</p>
<p>Abū Sinān said, ‘When I buried my son Sinān, Abū Ṭalḥah al-Khawlānī was standing at the edge of the grave. When I was about to leave, he took my hand and tried to cheer me up. He said, “Shall I give you some good news, Abū Sinān? Ad-Ḍaḥḥāk reported to me from Abū Mūsā that the Prophet ﷺ</p>	<p>अबू सिनान कहते हैं: “जब मैंने अपने बेटे सिनान को दफ़न किया तो अबू तल्हा ख़ौलानी क़ब्र के किनारे खड़े थे। जब मैं वापस जाने लगा तो उन्होंने मेरा हाथ पकड़ा और मुझे तसल्ली देने की कोशिश की। उन्होंने कहा: ‘ऐ अबू सिनान! क्या मैं तुम्हें एक खुशख़बरी न सुनाऊँ? दहहाक ने मुझे अबू मूसा के हवाले से बताया कि</p>

<p>said, ‘When someone’s child dies, Allah says to the angels, “You have taken the child of My slave?” “Yes,” they reply. He asks, “You took the apple of his eye?” “Yes,” they reply. He asks, “What did My slave say?” They reply, “He praised You and said, ‘We belong to Allah and to Him we will return.’” Allah Almighty will say, “Build My slave a house in the Garden and name it the House of Praise.”’</p>	<p>नबी ﷺ ने फ़रमाया:” “जब किसी शख्स का बच्चा फ़ौत हो जाता है तो अल्लाह तआला फ़रिशतों से फ़रमाता है: ‘क्या तुमने मेरे बंदे के बच्चे की रूह क़ब्ज़ कर ली?’ वे कहते हैं: ‘जी हाँ।’ अल्लाह पूछता है: ‘क्या तुमने उसकी आँखों का नूर ले लिया?’ वे कहते हैं: ‘जी हाँ।’ फिर अल्लाह पूछता है: ‘मेरे बंदे ने क्या कहा?’ वे जवाब देते हैं: ‘उसने तेरी हम्द की और कहा: इन्ना लिल्लाहि वा इन्ना इलैहि राजिऊन (हम अल्लाह ही के हैं और उसी की तरफ़ लौटने वाले हैं)।” फिर अल्लाह तआला फ़रमाता है: ‘मेरे बंदे के लिए जन्नत में एक घर बनाओ और उसका नाम “बैतुल हम्द” (हम्द का घर) रखो।’</p>
<p>Muslim related from Umm Salamah that the Messenger of Allah ﷺ said, ‘There is no Muslim who is afflicted by a calamity and then says, “We belong to Allah and to Him we return. O Allah, give me a reward for my calamity and give me something better to replace it,” without Allah granting him something better in its place.’ This is indicated</p>	<p>उम्मे सलमा से रिवायत है कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया: “कोई मुसलमान ऐसा नहीं जिसे कोई मुसीबत पहुँचे और वह यह कहे: ‘इन्ना लिल्लाहि वा इन्ना इलैहि राजिऊन। अल्लाहुम्मा अजुर्नी फी मुसीबती व अखलिफ़ ली खैरन मिन्हा’ (हम अल्लाह ही के हैं और उसी की तरफ़ लौटने वाले हैं। ऐ अल्लाह! मेरी इस मुसीबत पर मुझे अज़्र अता फ़रमा और इसके बदले मुझे इससे बेहतर</p>

<p>by the words of Allah Almighty: ‘Give good news to the steadfast.’ (2:155). The replacement which Allah gave Umm Salamah was the Messenger of Allah ﷺ. He married her when her husband, Abū Salamah, died. Otherwise there is an ample reward in the Next World, as in the ḥadīth of Abū Mūsā.</p>	<p>अता कर) मगर यह कि अल्लाह उसे उसके बदले में इससे बेहतर चीज़ अता फ़रमा देता है।” इसकी तरफ़ अल्लाह तआला के इस फ़रमान में इशारा है: “सब्र करने वालों को खुशख़बरी दे दो।” (2:155) उम्मे सलमा को अल्लाह तआला ने जो बदला अता फ़रमाया वह खुद रसूलुल्लाह ﷺ थे, क्योंकि उनके शौहर अबू सलमा के इंतिक़ाल के बाद रसूलुल्लाह ﷺ ने उनसे निकाह फ़रमाया। वरना आख़िरत में तो बहुत बड़ा अज़्र मौजूद है, जैसा कि अबू मूसा की हदीस में बयान हुआ है।</p>
<p><b>Those are the people who will have blessings and mercy from their Lord; they are the ones who are guided. [2:157]</b></p>	<p><b>यही वे लोग हैं जिन पर उनके रब की तरफ़ से दरूद और रहमत है, और यही लोग हिदायत पाने वाले हैं। [2:157]</b></p>
<p><b>Those are the people who will have blessings and mercy from their Lord.</b></p>	<p><b>यही वे लोग हैं जिन पर उनके रब की तरफ़ से बरकतें और रहमत हैं।</b></p>
<p>The blessings (ṣalawāt) of Allah on His slave are His pardon, mercy, blessing and honour for him in this world and the Next. Az-Zajjāj said, ‘Ṣalawāt from Allah means forgiveness and good praise.’</p>	<p>अल्लाह की अपने बंदे पर सलवात (बरकतें) यह हैं कि वह उसे माफ़ करे, उस पर रहमत फ़रमाए, उसे बरकत दे और दुनिया व आख़िरत में उसे इज़्ज़त अता करे। अज़-ज़ज्जाज ने कहा: “अल्लाह की तरफ़ से</p>



<p>One element of this is the funeral prayer for the dead person which entails praise for him and supplication for him. The word ‘mercy’ is repeated, when the phrase varies, for emphasis and to expand the meaning. It is said that by ‘mercy’ Allah means removing grief and fulfilling every need. In al-Bukhārī, ‘Umar said, “The two sides of the baggage and what is put on it.” The two sides [of the carriers on the camel] mean blessing and mercy, and what is on top is ‘those are the guided.’ It is said that it means entitlement to the reward and an ample wage. It is also said that it is making disasters easier to bear and alleviating sorrow.</p>	<p>सलवात का मतलब मग़फ़िरत और अच्छा ज़िक्र है।” इसमें एक पहलू मय्यित की नमाज़-ए-जनाज़ा भी है, क्योंकि उसमें मय्यित की तारीफ़ और उसके लिए दुआ की जाती है। लफ़्ज़ “रहमत” को दोबारा ज़िक्र किया गया है, हालाँकि इबारत बदल जाती है, ताकि तअक़ीद हो और मानी को वसीअ किया जाए। यह भी कहा गया है कि “रहमत” से मुराद यह है कि अल्लाह ग़म को दूर कर दे और हर हाजत को पूरा फ़रमा दे। सहीह बुख़ारी में उमर ने फ़रमाया: “दो तरफ़ें सामान की और जो उस पर रखा जाता है।” इन दो तरफ़ों से मुराद बरकत और रहमत हैं, और जो ऊपर रखा गया है वह यह है: “यही लोग हिदायत पाए हुए हैं।” यह भी कहा गया है कि इससे मुराद अज़्र के मुस्तहिक़ होना और बड़ा बदला पाना है। एक क़ौल यह भी है कि इसका मतलब मुसीबतों को बर्दाश्त करना आसान कर देना और ग़म को हल्का कर देना है।</p>
<p><b>Ṣafā and Marwah are among the Landmarks of Allah, so anyone who goes on ḥajj to the House or does ‘umrah incurs no wrong in going</b></p>	<p><b>बेशक सफ़ा और मरवा अल्लाह की निशानियों में से हैं, पस जो शख्स बैतुल्लाह का हज करे या उमरा अदा करे तो उस पर कोई</b></p>



<p>back and forth between them. If anyone spontaneously does good, Allah is All-Thankful, All-Knowing. [2:158]</p>	<p>गुनाह नहीं कि वह उन दोनों के दरमियान चक्कर लगाए। और जो कोई खुशदिली से नेकी करे तो यक़ीनन अल्लाह क़द्रदान और ख़ूब जानने वाला है। [2:158]</p>
<p>Şafā and Marwah are among the Landmarks of Allah,</p>	<p>बेशक सफ़ा और मरवा अल्लाह की निशानियों में से हैं।</p>
<p>Al-Bukhārī related that ‘Āṣim ibn Sulaymān said, ‘I asked Anas ibn Mālik about Şafā and Marwah and he said, “We used to think that the observance connected with them was something from the Jāhiliyyah. When Islam came, we kept back from them and then Allah revealed this.”’ In at-Tirmidhī we find that ‘Urwah said, ‘I said to ‘Ā’ishah, “I do not think that someone who does not go between Şafā and Marwah owes any sacrifice and I do not care if I go between them or not.” She said, “My nephew, what you say is wrong. The Messenger of Allah ﷺ went between them and so did all the Muslims. Those who previously used to</p>	<p>इमाम बुख़ारी ने रिवायत किया है कि आसिम बिन सुलेमान कहते हैं: “मैंने अनस बिन मालिक से सफ़ा और मरवा के बारे में पूछा तो उन्होंने कहा: ‘हम समझते थे कि उनसे संबंधित अमल जाहिलियत के ज़माने की चीज़ है। जब इस्लाम आया तो हम उनसे दूर रहे, फिर अल्लाह तआला ने यह आयत नाज़िल फ़रमाई।” इमाम तिरमिज़ी में रिवायत है कि उरवा कहते हैं: “मैंने आयशा से कहा: ‘मेरा ख़याल है कि अगर कोई शख्स सफ़ा और मरवा के दरमियान सर्ई न करे तो उस पर कोई कुर्बानी लाज़िम नहीं, और मुझे भी इस बात की परवाह नहीं कि मैं उनके दरमियान जाऊँ या न जाऊँ।’ उन्होंने फ़रमाया: ‘मेरे भांजे! तुम्हारी बात सही नहीं। रसूलुल्लाह ﷺ ने उनके दरमियान सर्ई की और तमाम मुसलमानों ने भी ऐसा ही किया। जो लोग पहले मनात नामी</p>

<p>go into <i>ihrām</i> for the idol <i>Manāt</i>, which they used to worship at <i>al-Mushallal</i>, considered it wrong to go between <i>Ṣafā</i> and <i>Marwah</i>, so Allah revealed: ‘<i>Ṣafā</i> and <i>Marwah</i> are among the Landmarks of Allah.’ If it was as you say, it would have been: ‘incurs no wrong if he does not go between them.’” <i>Az-Zuhrī</i> said that he mentioned that to <i>Abū Bakr ibn ‘Abd ar-Raḥmān ibn al-Ḥārith ibn Hishām</i> and he liked it and remarked, ‘There is something I heard men of knowledge say: “Those Arabs who do not go between <i>Ṣafā</i> and <i>Marwah</i> said that our <i>ṭawāf</i> between these two stones is something from the <i>Jāhiliyyah</i> and others among the <i>Anṣār</i> said, ‘We are commanded to do <i>ṭawāf</i> of the House and go between <i>Ṣafā</i> and <i>Marwah</i>.’ So Allah revealed: ‘<i>Ṣafā</i> and <i>Marwah</i> are among the Landmarks of Allah.’” <i>Abū Bakr</i> said, ‘I think it was revealed about these groups.’ <i>Al-Bukhārī</i></p>	<p>बुत के लिए इहराम बाँधते थे, जिसकी वे मशल्लल के मुक़ाम पर इबादत करते थे, वे सफ़ा और मरवा के दरमियान सई को सही नहीं समझते थे। इस पर अल्लाह तआला ने यह आयत नाज़िल फ़रमाई: “सफ़ा और मरवा अल्लाह की निशानियों में से हैं।” अगर बात वैसी होती जैसी तुम कहते हो तो आयत यूँ होती: “उस पर कोई गुनाह नहीं अगर वह उनके दरमियान न जाए।” अज़-ज़ुहरी कहते हैं कि उन्होंने यह बात अबू बक्र बिन अब्दुरहमान बिन हारिस बिन हिशाम को बताई तो उन्होंने इसे पसंद किया और कहा: “मैंने अहल-ए-इल्म से यह बात सुनी है कि कुछ अरब जो सफ़ा और मरवा के दरमियान सई नहीं करते थे, कहते थे कि इन दो पत्थरों के दरमियान हमारा तवाफ़ जाहिलियत के ज़माने का अमल है। जबकि अंसार के कुछ लोग कहते थे: ‘हमें बैतुल्लाह का तवाफ़ करने और सफ़ा व मरवा के दरमियान सई करने का हुक्म दिया गया है।’ फिर अल्लाह तआला ने यह आयत नाज़िल फ़रमाई: ‘सफ़ा और मरवा अल्लाह की निशानियों में से हैं।” अबू बक्र ने कहा: “मेरा ख़याल है कि यह आयत इन्हीं दोनों गिरोहों</p>
---	---

<p>transmitted something to that effect. He said that it is a sound <i>ḥasan ḥadīth</i>.</p>	<p>के बारे में नाज़िल हुई है।” इमाम बुखारी ने भी इसी मफ़हूम की रिवायत नक़ल की है और फ़रमाया कि यह सहीह हसन हदीस है।</p>
<p>Also in al-Bukhārī there is a ḥadīth in which ‘Ā’ishah said, ‘The Messenger of Allah ﷺ made a sunnah of going between them. No one should abandon going between them.’ Then she told Abū Bakr ibn ‘Abd ar-Raḥmān and he said, ‘This is a piece of knowledge I have not heard. I did hear some of the people of knowledge saying that the people – except for those ‘Ā’ishah mentioned who went into iḥrām for Manāt – all used to go between Ṣafā and Marwah. When Allah Almighty mentioned ṭawāf of the House and did not mention Ṣafā and Marwah in the Qur’an, they said, “Messenger of Allah, we used also do ṭawāf of Ṣafā and Marwah and Allah has revealed ṭawāf around the House without mentioning Ṣafā. Is it a sin for us to do ṭawāf of Ṣafā and Marwah?”’</p>	<p>इमाम बुखारी में एक हदीस यह भी है कि आयशा ने फ़रमाया: “रसूलुल्लाह ﷺ ने सफ़ा और मरवा के दरमियान सई को सुन्नत करार दिया है, इसलिए किसी के लिए जायज़ नहीं कि वह उनके दरमियान सई को छोड़ दे।” फिर उन्होंने यह बात अबू बक्र बिन अब्दुर्रहमान को बताई तो उन्होंने कहा: “यह इल्म की एक ऐसी बात है जो मैंने पहले नहीं सुनी थी। अलबत्ता मैंने कुछ अहल-ए-इल्म को यह कहते सुना है कि लोग—सिवाय उनके जिनका ज़िक्र आयशा ने किया है जो मनात के लिए इहराम बाँधते थे—सब सफ़ा और मरवा के दरमियान सई किया करते थे।” जब अल्लाह तआला ने कुरआन में बैतुल्लाह के तवाफ़ का ज़िक्र किया और सफ़ा व मरवा का ज़िक्र नहीं किया तो लोगों ने कहा: ‘ऐ अल्लाह के रसूल! हम सफ़ा और मरवा का तवाफ़ भी किया करते थे, लेकिन अल्लाह ने बैतुल्लाह के तवाफ़ का ज़िक्र किया है और सफ़ा का ज़िक्र</p>

<p>Allah Almighty then revealed: “Ṣafā and Marwah are among the Landmarks of Allah.” Abū Bakr said, ‘I heard that this āyah was revealed about both groups – those who used to consider it a sin to do ṭawāf of Ṣafā and Marwah in the time of Jāhiliyyah and those who had done ṭawāf of them and then considered it a sin to do so in the time of Islam – because Allah Almighty had commanded ṭawāf of the House without mentioning Ṣafā, only speaking of it after what He said about ṭawāf of the House.’</p>	<p>नहीं किया। क्या हमारे लिए सफ़ा और मरवा के दरमियान सई करना गुनाह है? इस पर अल्लाह तआला ने यह आयत नाज़िल फ़रमाई: “बेशक सफ़ा और मरवा अल्लाह की निशानियों में से हैं।” अबू बक्र ने कहा: “मैंने सुना है कि यह आयत दोनों गिरोहों के बारे में नाज़िल हुई थी: एक वे जो जाहिलियत के ज़माने में सफ़ा और मरवा के दरमियान सई को गुनाह समझते थे, और दूसरे वे जो जाहिलियत में सई करते थे लेकिन इस्लाम के बाद उसे गुनाह समझने लगे थे, क्योंकि अल्लाह तआला ने बैतुल्लाह के तवाफ़ का हुक्म दिया था और सफ़ा का ज़िक्र नहीं किया था—बाद में बैतुल्लाह के तवाफ़ के ज़िक्र के बाद सफ़ा व मरवा का बयान फ़रमाया गया।”</p>
<p>At-Tirmidhī related that ‘Āṣim ibn Sulaymān al-Aḥwal said, ‘I asked Mālik about Ṣafā and Marwah and he said, “They were among the Landmarks of the Jāhiliyyah. When Islam came, we refrained from them. Then Allah revealed: ‘Ṣafā and Marwah are among the Landmarks of Allah, so anyone</p>	<p>इमाम तिर्मिज़ी ने रिवायत किया है कि आसिम बिन सुलेमान अल-अहवल कहते हैं: “मैंने मालिक से सफ़ा और मरवा के बारे में पूछा तो उन्होंने कहा: ये जाहिलियत के ज़माने की निशानियों में से थे। जब इस्लाम आया तो हम उनसे रुक गए। फिर अल्लाह तआला ने यह आयत नाज़िल फ़रमाई: “बेशक सफ़ा और</p>

<p>who goes on ḥajj to the House or does ‘umrah incurs no wrong in going back and forth between them.” He said, “They are voluntary. ‘If anyone spontaneously does good, Allah is All-Thankful, All-Knowing.” He said that it is a sound ḥasan ḥadīth. Al-Bukhārī also transmitted it.</p>	<p>मरवा अल्लाह की निशानियों में से हैं, पस जो शख्स बैतुल्लाह का हज करे या उमरा अदा करे तो उस पर कोई गुनाह नहीं कि वह उन दोनों के दरमियान सई करे।” उन्होंने कहा: “यह नफ़ल हैं। ‘और जो कोई खुशदिली से नेकी करे तो अल्लाह क़द्रदान और ख़ूब जानने वाला है।” इमाम तिर्मिज़ी ने कहा कि यह सहीह हसन हदीस है। इमाम बुखारी ने भी इसे रिवायत किया है।</p>
<p>Ibn ‘Abbās said, ‘In the time of Jāhiliyyah some shayṭāns used to play music the entire night between Ṣafā and Marwah, and there were idols between them. When Islam came, the Muslims said, “Messenger of Allah, we do not go between Ṣafā and Marwah. To do so is shirk.” Then this was revealed.’ Ash-Sha‘bī said, ‘In the Jāhiliyyah, there was an idol called Isāf on Ṣafā, and an idol called Nā’ilah on Marwah. They used to wipe their hands on the idols when they went between them. So the Muslims refused to go between them. It was because of that that the āyah was</p>	<p>इब्र अब्बास ने फ़रमाया: “जाहिलिय्यत के ज़माने में कुछ शयातीन सफ़ा और मरवा के दरमियान पूरी रात मौसीक्री बजाते रहते थे, और उनके दरमियान बुत भी नस्ब थे। जब इस्लाम आया तो मुसलमानों ने कहा: ‘ऐ अल्लाह के रसूल! हम सफ़ा और मरवा के दरमियान नहीं जाएँगे, क्योंकि ऐसा करना शिर्क है।’ फिर यह आयत नाज़िल हुई।” अश-शाबी ने कहा: “जाहिलिय्यत के ज़माने में सफ़ा पर एक बुत था जिसे इसाफ़ कहा जाता था और मरवा पर एक बुत था जिसे नाइला कहा जाता था। लोग जब इन दोनों के दरमियान सई करते तो उन बुतों पर अपने हाथ फेरते थे। इस</p>

<p>revealed.’</p>	<p>वजह से मुसलमानों ने सफ़ा और मरवा के दरमियान सई करने से इंकार कर दिया। इसी कारण यह आयत नाज़िल हुई।”</p>
<p>The root meaning of the name <i>Ṣafā</i> is smooth stone. It is a well known high rock at Makkah and Marwah is another high rock. That is why they take the definite article. <i>Ṣafā</i> gets its name because <i>Ādam</i>, the chosen one (<i>muṣṭafā</i>), stopped there, and so it was named after him. <i>Ḥawwā</i> stopped on Marwah and it was named after the word for ‘woman’ (<i>mar’ah</i>). Allah knows best.</p>	<p>सफ़ा के नाम का मूल अर्थ चिकना पत्थर है। यह मक्का में एक प्रसिद्ध ऊँची चट्टान है, और मरवा भी एक दूसरी ऊँची चट्टान है। इसी कारण इन दोनों के नाम के साथ निश्चित उपपद (definite article) प्रयोग किया जाता है। कहा जाता है कि सफ़ा का नाम इसलिए रखा गया कि हज़रत आदम अलैहिस्सलाम (अल-मुस्तफ़ा) वहाँ ठहरे थे, इसलिए उसका नाम उनसे संबद्ध हो गया। और हज़रत हव्वा अलैहस्सलाम मरवा पर ठहरी थीं, इसलिए उसका नाम “मरवा” स्त्री (मर’अह) के शब्द से लिया गया। और अल्लाह ही बेहतर जानता है।</p>
<p>‘The Landmarks (<i>sha‘ā’ir</i>) of Allah’ are among His signs and the places of His worship. These are the sites of acts of worship which Allah informs us about, thereby making them signs for people: the standing, <i>sa‘y</i>, and sacrifice. <i>Shi‘ār</i> is an</p>	<p>“अल्लाह की निशानियाँ (शआइरुल्लाह)” उसकी अलामतों और उसकी इबादत के मक़ामात में से हैं। ये वे जगहें हैं जहाँ इबादत के आमाल अंजाम दिए जाते हैं, जिनके बारे में अल्लाह ने हमें खबर दी है और इस तरह उन्हें लोगों के लिए निशानी बना दिया है: जैसे वुकूफ़</p>

<p>identification mark of the kind put on the hump of camels to be sacrificed.</p>	<p>(ठहरना), सई करना और कुर्बानी देना। लफ़्ज़ "शिआर" उस निशान को भी कहते हैं जो कुर्बानी के लिए मुकर्रर किए गए ऊँटों के कूबड़ पर लगाया जाता था ताकि उनकी पहचान हो सके।</p>
<p><b>so anyone who goes on ḥajj to the House or does ‘umrah</b></p>	<p><b>पस जो शख्स बैतुल्लाह का हज करे या उमरा अदा करे</b></p>
<p>He heads for it. The root meaning of the word “ḥajj” means to aim for something. ‘Umrah means a visit.</p>	<p>वह उसकी तरफ़ क़स्द करता है। शब्द "हज" का मूल अर्थ किसी चीज़ का इरादा करना या उसकी ओर रुख़ करना है। और "उमरा" का अर्थ ज़ियारत करना है।</p>
<p><b>incurs no wrong in going back and forth between them</b></p>	<p><b>उन दोनों के दरमियान आने-जाने (सई करने) में उस पर कोई गुनाह नहीं।</b></p>
<p>They do not commit any sin by doing that. The root of the word for ‘junāḥ’ (wrong) is <i>junūḥ</i>, which means bending and is used for the limbs (<i>jawāniḥ</i>) because they bend. To use this expression means to permit the action. ‘Urwah thought that it meant that it is permissible to abandon <i>tawāf</i> and then he saw that the Sharī‘ah confirmed the fact that</p>	<p>इस अमल को करने में वे कोई गुनाह नहीं करते। शब्द "जुनाह" (गुनाह) की जड़ "जुनूह" है, जिसका अर्थ झुकना है। यह शब्द अंगों (जवानिह) के लिए भी इस्तेमाल होता है, क्योंकि वे झुकते हैं। इस तअबीर का इस्तेमाल इस अमल की इजाज़त देने के लिए किया गया है। उरवा ने पहले यह समझा था कि इसका मतलब यह है कि तवाफ़ (या सई) को छोड़ देना जायज़ है, लेकिन बाद में उन्होंने देखा</p>

<p>there is no allowance to abandon it.</p>	<p>कि शरीअत ने इस बात की तसदीक की है कि इसे छोड़ने की कोई इजाज़त नहीं।</p>
<p>At-Tirmidhī transmitted from Jābir that, when the Prophet ﷺ came to Makkah, he went around the House seven times, and recited, ‘Take the Maqām of Ibrāhīm as a place of prayer’ (2:125); and he prayed behind the Maqām. Then he went to the Stone and kissed it and then said, ‘We begin with what Allah began with.’ So he began with Ṣafā. The correct practice, therefore, according to the people of knowledge, is that you begin with Ṣafā. This is a sound <i>ḥasan ḥadīth</i>. According to the people of knowledge, the proper action is to begin with Ṣafā. It is not permitted to begin with Marwah.</p>	<p>इमाम तिरमिज़ी ने जाबिर से रिवायत नक़ल की है कि जब नबी ﷺ मक्का आए तो आपने बैतुल्लाह के गिर्द सात चक्कर लगाए और यह आयत पढ़ी: “मक़ाम-ए-इब्राहीम को नमाज़ की जगह बना लो” (अल-बक़रह 2:125), फिर आपने मक़ाम-ए-इब्राहीम के पीछे नमाज़ अदा की। इसके बाद आप हजर-ए-अस्वद के पास आए और उसे बोसा दिया, फिर फ़रमाया: “हम उसी से शुरुआत करते हैं जिससे अल्लाह ने शुरुआत की है।” चुनाँचे आपने सफ़ा से शुरुआत की। इस बुनियाद पर अहल-ए-इल्म के नज़दीक सही तरीक़ा यह है कि सई की शुरुआत सफ़ा से की जाए। यह सहीह हसन हदीस है। अहल-ए-इल्म के मुताबिक सही अमल यही है कि सफ़ा से इब्तिदा की जाए, और मरवा से शुरुआत करना जायज़ नहीं।</p>
<p>Scholars disagree about the obligatory nature of <i>sa’y</i> between Ṣafā and Marwah. Ash-Shāfi‘ī and Ibn Ḥanbal said that it is a pillar of the</p>	<p>उलमा के बीच सफ़ा और मरवा के दरमियान सई के फ़र्ज़ होने के बारे में इख़्तिलाफ़ है। इमाम शाफ़ई और इमाम इब्न हनबल का कहना है कि यह हज का एक रुक्न है। यही इमाम</p>

<p>Hajj. This is the well-known position in the school of Mālik, since the Prophet ﷺ said, ‘Do <i>sa’y</i>. Allah has prescribed <i>sa’y</i> for you.’ Ad-Dāraqutnī transmitted it. ‘<i>Kataba</i>’ means ‘has made obligatory’ as we see in the Book and <i>ḥadīths</i>. Ibn Mājah transmitted that an <i>umm walad</i> belonging to Shaybah said, ‘I saw the Messenger of Allah ﷺ doing <i>sa’y</i> between Ṣafā and Marwah. He was saying, “Al-Abṭah should only be crossed quickly.”’ If someone omits it, or omits even one circuit of it deliberately or out of forgetfulness, he must return from his land, or from wherever he remembers, to Makkah and do <i>tawāf</i> and <i>sa’y</i>, because <i>sa’y</i> is only connected to <i>tawāf</i>.</p>	<p>मालिक के मज़हब में मशहूर क़ौल है, क्योंकि नबी ﷺ ने फ़रमाया: “सई करो। अल्लाह ने तुम पर सई मुक़रर कर दी है।” इस रिवायत को इमाम दारकुत्नी ने नक़ल किया है। शब्द “कतबा” का अर्थ फ़र्ज़ कर देना है, जैसा कि कुरआन और अहादीस में आता है। इब्न माजह ने रिवायत किया है कि शैबह की एक उम्मे वलद ने कहा: “मैंने रसूलुल्लाह ﷺ को सफ़ा और मरवा के दरमियान सई करते देखा, और आप ﷺ फ़रमा रहे थे: ‘अल-अबतह को सिर्फ़ तेज़ी से पार किया जाए।’” अगर कोई शख्स सई को छोड़ दे, या उसका एक चक्कर भी जान-बूझकर या भूल से छोड़ दे, तो उसे अपने मुल्क से—या जहाँ भी उसे याद आए—वापस मक्का आना होगा और तवाफ़ और सई करना होगी, क्योंकि सई सिर्फ़ तवाफ़ के साथ जुड़ी हुई है।</p>
<p>Mālik said that <i>sa’y</i> is the same in ḥajj or ‘umrah, although it is not a <i>fard</i> in ‘umrah. If someone has sexual contact with a woman, he must perform ‘umrah and sacrifice</p>	<p>इमाम मालिक ने कहा कि सई हज और उमरा दोनों में एक जैसी है, हालांकि उमरा में यह फ़र्ज़ नहीं है। अगर कोई शख्स (उमरा की हालत में) औरत से संबंध क़ायम कर ले तो इमाम मालिक के नज़दीक उस पर</p>

<p>according to Mālik, but he completes his practices. Ash-Shāfi‘ī said that he owes a sacrifice and there is no point in doing ‘umrah if he has gone back and performed <i>tawāf</i> and <i>sa‘y</i>. Abū Ḥanīfah and his people, ath-Thawrī and ash-Sha‘bī said that <i>sa‘y</i> is not mandatory. If someone omits it in the ḥajj and then returns to his homeland without doing it, he owes a sacrifice because it is one of the sunnahs of ḥajj. That is the position of Mālik in <i>al-Utbiyyah</i>. It is, however, related from Ibn ‘Abbās, Ibn az-Zubayr, Anas ibn Mālik and Ibn Sīrīn that it is voluntary based on this āyah.</p>	<p>उमरा दोबारा करना और कुर्बानी देना लाज़िम है, लेकिन वह अपने मौजूदा आमाल को पूरा करेगा। इमाम शाफ़ई ने कहा कि उस पर कुर्बानी वाजिब है, और अगर वह वापस आकर तवाफ़ और सई कर ले तो दोबारा उमरा करने का कोई फ़ायदा नहीं। इमाम अबू हनीफ़ा और उनके असहाब, तथा सुफ़यान सौरी और शाबी का क़ौल है कि सई वाजिब नहीं है। अगर कोई शख्स हज में सई छोड़ दे और अपने वतन वापस चला जाए तो उस पर कुर्बानी लाज़िम होगी, क्योंकि यह हज की सुन्नतों में से एक है। अल-उत्बिय्यह में इमाम मालिक का भी यही क़ौल नक़ल किया गया है। हालाँकि इब्र अब्बास, इब्र जुबैर, अनस बिन मालिक और इब्र सीरीन से रिवायत है कि इस आयत की बुनियाद पर सई को नफ़ल करार दिया गया है।</p>
<p><b>If anyone spontaneously does good, Allah is All-Thankful, All-Knowing</b></p>	<p><b>और जो कोई ख़ुशदिली से नेकी करे तो अल्लाह क़द्रदान और ख़ूब जानने वाला है।</b></p>
<p>Ḥamzah and al-Kisā‘ī recite “<i>yattawwa‘a</i>”, as with 2:184, while the rest have “<i>tatawwa‘a</i>” in the past tense.</p>	<p>हमज़ा और किसाई इसे “यत्तव्वा‘अ” पढ़ते हैं, जैसा कि (अल-बकरह 2:184) में है, जबकि बाक़ी कुराई इसे माज़ी के सिरो “ततव्वा‘अ” के साथ</p>

<p>This refers to any supererogatory good action someone does which is not imposed on them, whether <i>ṭawāf</i> or anything else. Allah will show gratitude for the action by rewarding them. What is sound is what ash-Shāfi‘ī believed, based on what we mentioned and the fact that the Prophet ﷺ said, ‘Take your practices from me.’ Therefore it is clear that it is part of the ḥajj and it must be obligatory in the same way as is the case in his making the number of <i>rak‘ahs</i> clear ﷺ. The same is true of all of that unless it is agreed that it is sunnah or voluntary. Ṭulayb said, ‘Ibn ‘Abbās saw some people doing <i>ṭawāf</i> between Ṣafā and Marwah and said, “This is what your mother, Ismā‘īl’s mother, bequeathed you.”’ This is confirmed in <i>Ṣaḥīḥ Bukhārī</i> as we will see in <i>Sūrah Ibrāhīm</i>.</p>	<p>पढ़ते हैं। इससे मुराद हर वह नफ़ल नेकी है जो कोई शख्स अपनी खुशी से करे और जो उस पर लाज़िम न हो, चाहे वह तवाफ़ हो या कोई और अमल। अल्लाह तआला इस अमल की क़द्र करता है और उस पर अज़्र अता फ़रमाता है। सही बात वही है जिसे इमाम शाफ़ई ने इख़्तियार किया है, जैसा कि पहले बयान किया गया और इसलिए भी कि नबी ﷺ ने फ़रमाया: “अपने मनासिक मुझसे सीख लो।” इससे वाज़ेह होता है कि यह हज का हिस्सा है और इसी तरह वाजिब होना चाहिए, जैसे आपने ﷺ नमाज़ की रकअतों की तादाद को वाज़ेह फ़रमाया। इसी तरह दूसरे आमाल का भी यही हुक्म है, सिवाय उसके जिसके बारे में इज्मा हो कि वह सुन्नत या नफ़ल है। तुलैब ने कहा: “इब्र अब्बास ने कुछ लोगों को सफ़ा और मरवा के दरमियान तवाफ़ करते देखा तो फ़रमाया: ‘यह वही चीज़ है जो तुम्हें तुम्हारी माँ—यानी इस्माईल की माँ—ने सिखाई है।’” यह बात सहीह बुखारी में भी आई है, जैसा कि हम सूरह इब्राहीम में देखेंगे।</p>
<p>It is not permitted for anyone to do <i>ṭawāf</i> of the House or go</p>	<p>किसी शख्स के लिए जायज़ नहीं कि वह बैतुल्लाह का तवाफ़ करे या सफ़ा</p>

<p>between Ṣafā and Marwah riding unless he has an excuse. If he does this with a valid excuse, then he owes a sacrifice. If he does it without an excuse, he must repeat the action as long as he is still at the House. Otherwise he must sacrifice. We say that because the Prophet ﷺ did <i>tawāf</i> himself and he said, ‘Take your practices from me.’ We are allowed to do that with an excuse because the Prophet ﷺ did <i>tawāf</i> on his camel and greeted the Corner with his whip, and when ‘Ā’ishah asked him about it, he said, ‘I am unwell.’ He also told her, ‘Do <i>tawāf</i> riding behind the people.’</p>	<p>और मरवा के दरमियान सई सवारी पर करे, मगर यह कि उसके पास कोई उज्र हो। अगर वह किसी सही उज्र की वजह से ऐसा करे तो उस पर कुर्बानी लाज़िम होगी। और अगर वह बिना उज्र के ऐसा करे तो जब तक वह बैतुल्लाह के पास मौजूद हो, उसे उस अमल को दोबारा करना होगा; वरना उसे कुर्बानी देनी होगी। हम ऐसा इसलिए कहते हैं कि नबी ﷺ ने खुद तवाफ़ किया और फ़रमाया: “अपने मनासिक मुझसे सीख लो।” अलबत्ता उज्र की सूरत में ऐसा करना जायज़ है, क्योंकि नबी ﷺ ने अपने ऊँट पर सवार होकर तवाफ़ किया और रुक्न (हजर-ए-अस्वद) को अपने कोड़े से इशारा किया। जब आयशा ने इसके बारे में पूछा तो आपने ﷺ फ़रमाया: “मैं बीमार हूँ।” और आपने ﷺ उनसे यह भी फ़रमाया: “लोगों के पीछे सवार होकर तवाफ़ कर लो।”</p>
<p>Our people differentiate between doing <i>tawāf</i> on a camel and on a person’s back. It is not permitted to do <i>tawāf</i> on a person’s back because then the person being carried is not the one performing <i>tawāf</i>;</p>	<p>हमारे उलमा ऊँट पर तवाफ़ करने और किसी इंसान की पीठ पर तवाफ़ करने के बीच फ़र्क करते हैं। किसी शख्स की पीठ पर तवाफ़ करना जायज़ नहीं, क्योंकि उस सूरत में तवाफ़ करने वाला वह शख्स नहीं</p>



<p>the one performing <i>tawāf</i> is the person who is carrying him. If he does <i>tawāf</i> on a camel, he is performing <i>tawāf</i>. Ibn Khuwayzimandād said, ‘This is a distinction in choice. It does satisfy the requirement. Do you not see that if someone faints and is carried in the rest of his <i>tawāf</i> or stops at ‘Arafāt while being carried, he has satisfied the requirement.’</p>	<p>होता जिसे उठाया गया है, बल्कि तवाफ़ करने वाला असल में वह होता है जो उसे उठाए हुए है। लेकिन अगर कोई शख्स ऊँट पर सवार होकर तवाफ़ करे तो वह खुद तवाफ़ करने वाला माना जाता है। इब्न खुवैज़िमंदाद ने कहा: “यह फ़र्क इख़्तियार के एतिबार से है, लेकिन इससे फ़र्ज़ अदा हो जाता है। क्या तुम नहीं देखते कि अगर कोई शख्स बेहोश हो जाए और उसके बाक़ी तवाफ़ में उसे उठाकर ले जाया जाए, या वह अरफ़ात में उठाकर ठहराया जाए, तो उसका फ़र्ज़ अदा हो जाता है।”</p>
<p><b>Those who hide the Clear Signs and Guidance We have sent down, after We have made it clear to people in the Book, Allah curses them, and the cursers curse them – [2:159]</b></p>	<p><b>जो लोग हमारी नाज़िल की हुई रौशन निशानियों और हिदायत को छिपाते हैं, इसके बाद कि हमने उसे किताब में लोगों के लिए वाज़ेह कर दिया है, उन पर अल्लाह लानत करता है और लानत करने वाले भी उन पर लानत करते हैं। [2:159]</b></p>
<p><b>Those who hide the Clear Signs and Guidance We have sent down,</b></p>	<p><b>जो लोग हमारी नाज़िल की हुई रौशन निशानियों और हिदायत को छिपाते हैं</b></p>
<p>Allah tells us that anyone who hides the Clear Signs and Guidance is cursed. Scholars</p>	<p>अल्लाह तआला हमें बताता है कि जो शख्स रौशन निशानियों और हिदायत</p>



<p>disagree about what is meant that. It is said that the Jewish rabbis and Christian monks are the ones who concealed their knowledge of the coming of Muḥammad ﷺ and the Jews concealed the command about stoning. It is said that it means everyone who conceals the truth, and so it is general to all who conceal any knowledge of the dīn of Allah which should be made known. That is explained by the words of the Prophet ﷺ, ‘If anyone is asked about knowledge which he knows and conceals it, Allah will bridle him with a bridle of Fire on the Day of Rising.’ Abū Hurayrah and ‘Amr ibn al-‘Āṣ related it and Ibn Mājah transmitted it.</p>	<p>को छिपाता है वह मलऊन है। उलमा के बीच इसके मानी के बारे में इख्तिलाफ़ है। एक क़ौल यह है कि इससे मुराद यहूदी रब्बी और ईसाई राहिब हैं जिन्होंने रसूलुल्लाह ﷺ की आमद के बारे में अपने इल्म को छिपाया, और यहूदियों ने रज्म के हुक्म को भी छिपा लिया। यह भी कहा गया है कि इससे मुराद हर वह शख्स है जो हक़ को छिपाए; लिहाज़ा यह हुक्म आम है और हर उस शख्स को शामिल करता है जो अल्लाह के दीन के किसी ऐसे इल्म को छिपाए जिसे ज़ाहिर करना ज़रूरी हो। इसकी वज़ाहत नबी ﷺ के इस फ़रमान से होती है: “जिस शख्स से किसी ऐसे इल्म के बारे में पूछा जाए जो वह जानता हो और वह उसे छिपा ले, तो क़ियामत के दिन अल्लाह उसे आग की लगाम पहनाएगा।” यह रिवायत अबू हुरैरा और अम्र बिन अल-आस ने नक़ल की है, और इसे इब्न माजह ने रिवायत किया है।</p>
<p>That is counterbalanced by the statement of ‘Abdullāh ibn Mas‘ūd, ‘You should not tell people a <i>ḥadīth</i> which is beyond the grasp of their intellects lest it be a trial for</p>	<p>इसके मुक़ाबले में अब्दुल्लाह बिन मसऊद का यह क़ौल भी है: “लोगों को ऐसी हदीस न बयान करो जो उनकी अक़ल की पहुँच से बाहर हो, वरना वह उनमें से कुछ के लिए</p>

<p>some of them.’ The Prophet ﷺ also said, ‘Relate to people according to their ability to understand. Do you want Allah and His Messenger to be denied?’ This applies to some areas of knowledge, such as <i>kalām</i> and the like which not everyone can grasp. A scholar should transmit what can be grasped and deal with everyone according to their understanding. Allah knows best.</p>	<p>फ़ितना बन जाएगी।” नबी ﷺ ने भी फ़रमाया: “लोगों से उनकी समझ के मुताबिक़ बात करो। क्या तुम चाहते हो कि अल्लाह और उसके रसूल की तकज़ीब की जाए?” यह बात इल्म के कुछ शोबों पर लागू होती है, जैसे इल्म-ए-कलाम और इसी तरह के मसाइल जिन्हें हर शख़्स नहीं समझ सकता। इसलिए आलिम को चाहिए कि वही इल्म बयान करे जो समझा जा सके और हर शख़्स के साथ उसकी समझ के मुताबिक़ मामला करे। और अल्लाह ही बेहतर जानता है।</p>
<p>This <i>āyah</i> is the one which Abū Hurayrah was referring to when he said, ‘If it had not been for an <i>āyah</i> in the Book of Allah Almighty, I would not have told you a single <i>ḥadīth</i>.’ Scholars use it as evidence for the obligation of conveying true knowledge and in general of making knowledge clear without taking a wage for it, since no wage should be received for what it is mandatory to do, just as there is no wage for simply being a</p>	<p>यही वह आयत है जिसकी तरफ़ अबू हुरैरा ने इशारा किया था जब उन्होंने कहा: “अगर अल्लाह तआला की किताब में एक आयत न होती तो मैं तुम्हें एक भी हदीस बयान न करता।” उलमा इस आयत से इस बात पर दलील लेते हैं कि सच्चा इल्म पहुँचाना वाजिब है और आम तौर पर इल्म को वाज़ेह करना ज़रूरी है, और इस पर कोई मज़दूरी नहीं लेनी चाहिए; क्योंकि जिस काम का करना वाजिब हो उस पर मज़दूरी नहीं ली जाती, जिस तरह सिर्फ़ मुसलमान होने पर कोई मज़दूरी नहीं होती। इस मसले</p>

<p>Muslim. This has already been discussed in the commentary on <i>āyah</i> 41.</p>	<p>पर पहले आयत 41 की तफ़्सीर में गुफ़्तगू हो चुकी है।</p>
<p>The meaning of the <i>āyah</i> is that, when a scholar intends to conceal knowledge, he disobeys Allah. When that is not his intention, he is not obliged to convey something if he knows that other people know it. When he is asked, he is obliged by this <i>āyah</i> and the <i>ḥadīth</i> to convey what he knows. He is not, however, permitted to teach an unbeliever the Qur'an and knowledge of the <i>dīn</i> until he becomes Muslim. Similarly he is not permitted to teach an innovator proofs and arguments which he might then use to argue against the people who possess the truth. He should not instruct a litigant in techniques of legal advocacy so that he can use it against his opponent to take his money, nor should he teach a ruler a particular interpretation which he can then use to harm his</p>	<p>इस आयत का मफ़हूम यह है कि जब कोई आलिम इल्म को छिपाने का इरादा करे तो वह अल्लाह की नाफ़रमानी करता है। लेकिन अगर उसकी नीयत इल्म को छिपाने की न हो और वह जानता हो कि दूसरे लोग भी उस इल्म से वाकिफ़ हैं, तो उस पर लाज़िम नहीं कि वह उसे बयान करे। अलबत्ता जब उससे पूछा जाए तो इस आयत और हदीस की बुनियाद पर उस पर लाज़िम है कि वह अपने इल्म को बयान करे। ताहम किसी काफ़िर को कुरआन और दीन का इल्म उस वक़्त तक सिखाना जायज़ नहीं जब तक वह मुसलमान न हो जाए। इसी तरह किसी बिदअती को ऐसे दलाइल और हुज्जतें सिखाना भी जायज़ नहीं जिन्हें वह बाद में अहल-ए-हक़ के खिलाफ़ इस्तेमाल करे। इसी तरह किसी मुद्दई या फ़रीक़-ए-मुक़द्दमा को ऐसी क़ानूनी तदबीरें सिखाना भी दुरुस्त नहीं जिनके ज़रिये वह अपने मुक़ाबिल के खिलाफ़ चाल चल कर उसका माल ले ले। और न ही किसी हाकिम को</p>

<p>subjects. He should not inform fools of permissive opinions which they might then use as justification for committing forbidden acts or abandoning their obligations or other such things.</p>	<p>ऐसी खास तावील या तशरीह सिखानी चाहिए जिसे वह अपनी रइया को नुक़सान पहुँचाने के लिए इस्तेमाल करे। इसी तरह नादान लोगों को ऐसी रुख़्त या आसान राय बताना भी दुरुस्त नहीं जिन्हें वे बाद में हराम काम करने, वाजिबात छोड़ने या इसी तरह के दूसरे कामों के जवाज़ के तौर पर इस्तेमाल करें।</p>
<p>It is related that the Messenger of Allah ﷺ said, ‘Do not deny wisdom to those entitled to it and thus wrong them, and do not give it to those not entitled to it and thus wrong it.’ It is also reported that he said: ‘Do not hang pearls from the necks of swine,’ meaning teach <i>fiqh</i> to someone who is not able to grasp it. Saḥnūn said, ‘The <i>ḥadīth</i> of Abū Hurayrah and ‘Amr ibn al-‘Āṣ is about giving testimony.’ Ibn al-‘Arabī said, ‘What is sound is different to that because it says in the <i>ḥadīth</i>: “If anyone is asked about knowledge” and not “testimony”. One takes the literal meaning unless there is something to alter it.’ Allah</p>	<p>रिवायत है कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया: “हिकमत को उस शख्स से न रोको जो उसका हक़दार हो, वरना तुम उस पर जुल्म करोगे; और उसे उस शख्स को न दो जो उसका हक़दार नहीं, वरना तुम हिकमत पर जुल्म करोगे।” यह भी रिवायत किया गया है कि आपने ﷺ फ़रमाया: “सूअरों की गर्दनों में मोती न लटकाओ,” यानी ऐसे शख्स को फ़िक्ह न सिखाओ जो उसे समझने की सलाहियत न रखता हो। सहनून ने कहा: “अबू हुरैरा और अम्र बिन अल-आस की हदीस दरअसल गवाही देने के बारे में है।” इब्न अल-अरबी ने कहा: “सही बात इसके ख़िलाफ़ है, क्योंकि हदीस में ये अल्फ़ाज़ हैं: ‘अगर किसी से इल्म के बारे में पूछा जाए’ न कि ‘गवाही’ के</p>

<p>knows best.</p>	<p>बारे में। लिहाज़ा अस्ल मानी ही लिया जाएगा जब तक उसे बदलने की कोई दलील न हो।" और अल्लाह ही बेहतर जानता है।</p>
<p>The 'Clear Signs and Guidance' mentioned in the <i>āyah</i> are not specific things. On the contrary, it is a general statement, since guidance includes all knowledge of the <i>dīn</i>. The <i>āyah</i> is evidence for the obligation of acting by the statement of a single person because clarification would only be mandatory for him if it were mandatory to accept what he says. Allah says: 'except for those who sincerely repent and put things right and make things clear.' (2:160) So its ruling is that clarification occurs simply by virtue of them reporting it.</p>	<p>आयत में ज़िक्र की गई "रौशन निशानियाँ और हिदायत" किसी ख़ास चीज़ के लिए मख़सूस नहीं हैं, बल्कि यह एक आम बयान है, क्योंकि हिदायत में दीन के तमाम उलूम शामिल होते हैं। यह आयत इस बात पर भी दलील है कि एक शख्स के बयान पर अमल करना वाजिब हो सकता है, क्योंकि अगर उसकी बात को क़बूल करना वाजिब न होता तो उस पर वज़ाहत करना भी वाजिब न होता। अल्लाह तआला फ़रमाता है: "सिवाय उन लोगों के जो सच्ची तौबा करें, इस्लाह करें और हक़ को वाज़ेह करें।" (2:160) लिहाज़ा इस हुक्म के मुताबिक वज़ाहत सिर्फ़ इस बात से भी हासिल हो जाती है कि वे उसे बयान कर दें या नक़ल कर दें।</p>
<p>If it is said that it is possible that everyone is forbidden to conceal the matter, and commanded to make it clear, so that there will be a great number of people who report it,</p>	<p>अगर यह कहा जाए कि मुमकिन है सब लोगों को इस बात से रोका गया हो कि वे इस मामले को छिपाएँ और उन्हें हुक्म दिया गया हो कि उसे वाज़ेह करें, ताकि बहुत से लोग उसे बयान करें, तो इस बात के क़ाइल</p>



<p>we reply to those who say this that it is a mistake. That is because they were not forbidden to conceal things because they were among those who might collude in concealing knowledge. If someone is one of those who might collude in concealment, their report is not mandatory, and Allah knows best.</p>	<p>लोगों को हम जवाब देते हैं कि यह ग़लत है। इसकी वजह यह है कि उन्हें इसलिए छिपाने से मना नहीं किया गया कि वे ऐसे लोगों में से हों जो इल्म को छिपाने पर आपस में साज़बाज़ कर सकते हों। अगर कोई शख्स उन लोगों में से हो जो इल्म छिपाने में आपसी सहयोग कर सकते हों, तो उसकी ख़बर या रिवायत लाज़िम नहीं समझी जाती। और अल्लाह ही बेहतर जानता है।</p>
<p>The use of the words ‘Clear Signs and Guidance’ also indicates that it is permitted to conceal anything other than that, especially when there is fear of what its misunderstanding might provoke, in which case its concealment is even more emphatically encouraged. Fear of the consequences involved led Abū Hurayrah to do precisely that.</p>	<p>“रौशन निशानियाँ और हिदायत” के अल्फ़ाज़ का इस्तेमाल इस बात की तरफ़ भी इशारा करता है कि इनके अलावा कुछ मामलों को छिपाना जायज़ हो सकता है, ख़ास तौर पर उस वक़्त जब उसके ग़लत समझ लिए जाने का डर हो। ऐसी सूरत में उसे छिपाना और भी ज़्यादा मुनासिब समझा जाता है। नताइज के डर ही ने अबू हुरैरा को भी इसी तरह अमल करने पर आमादा किया था।</p>
<p>He said, ‘I preserved two vessels from the Messenger of Allah ﷺ. I have disseminated one of them. If I were to disseminate the other one, my</p>	<p>उन्होंने कहा: “मैंने रसूलुल्लाह ﷺ से इल्म के दो बर्तन महफूज़ किए। उनमें से एक को मैंने लोगों तक पहुँचा दिया है, लेकिन अगर मैं दूसरे को बयान कर दूँ तो मेरा गला काट</p>



<p>throat would be cut.’ Al-Bukhārī transmitted it. Our scholars say that the part which Abū Hurayrah did not disseminate, and on account of which he feared dissension or that he himself might be killed, was knowledge which was connected to seditions, information about apostates and hypocrites, and other such things which are not connected to Clear Signs and Guidance. And Allah knows best.</p>	<p>दिया जाएगा।” इस रिवायत को इमाम बुखारी ने नक़ल किया है। हमारे उलमा कहते हैं कि वह इल्म जिसे अबू हुरैरा ने बयान नहीं किया और जिसके बारे में उन्हें अंदेशा था कि उससे फ़ितना पैदा हो सकता है या उन्हें क़त्ल कर दिया जाएगा, दरअसल वह ऐसे उलूम थे जो फ़ितनों, मुर्तदीन और मुनाफ़िकों के हालात वगैरह से मुतअल्लिक़ थे, और उनका ताल्लुक़ रौशन निशानियों और हिदायत से नहीं था। और अल्लाह ही बेहतर जानता है।</p>
<p><b>after We have made it clear to people in the Book,</b></p>	<p><b>इसके बाद कि हमने उसे किताब में लोगों के लिए वाज़ेह कर दिया है</b></p>
<p>This alludes to the Clear Signs and Guidance which Allah has revealed to the human race. ‘The Book’ is generic, meaning all the Revealed Books.</p>	<p>यह इबारत उन रौशन निशानियों और हिदायत की तरफ़ इशारा करती है जो अल्लाह तआला ने इंसानों के लिए नाज़िल फ़रमाई हैं। यहाँ “किताब” का लफ़ज़ आम मानी में इस्तेमाल हुआ है, यानी इससे मुराद तमाम आसमानी किताबें हैं जो नाज़िल की गईं।</p>
<p><b>Allah curses them,</b></p>	<p><b>उन पर अल्लाह लानत करता है</b></p>
<p>He declares Himself free of them and puts them far from His reward, telling them they</p>	<p>वह उनसे अपनी बेज़ारी का ऐलान करता है और उन्हें अपने अज़्र से दूर कर देता है, और उन्हें बताता है कि वे</p>

<p>are cursed. The root meaning of curse is to put away and drive away.</p>	<p>मलऊन हैं। शब्द लानत का मूल अर्थ किसी को दूर करना और धुत्कार कर हटा देना है।</p>
<p><b>and the cursers curse them.</b></p>	<p><b>और लानत करने वाले भी उन पर लानत करते हैं।</b></p>
<p>Qatādah and ar-Rabī‘ said that the ‘cursers’ are the angels and the believers. Mujāhid and ‘Ikrimah say that they are the insects and beasts who curse them because they are afflicted by drought on account of the wrong actions of those evil scholars who conceal knowledge. Az-Zajjāj said that the correct view is that it is the angels and the believers. He says that the truth of the assertion that it is the beasts of the earth would necessarily depend on a text or a report to that effect and none has been found to back it up. There is, however, a ḥadīth from al-Barā’ ibn ‘Āzib in which the Prophet ﷺ said in reference to this fact that it is the beasts of the earth. This ḥadīth can be found in Ibn Mājah from Muḥammad ibn aṣ-Ṣabbāḥ</p>	<p>क़तादा और रबी‘ ने कहा है कि यहाँ “लानत करने वालों” से मुराद फ़रिश्ते और मोमिन हैं। मुजाहिद और इक्रिमा कहते हैं कि इससे मुराद ज़मीन के कीड़े-मकोड़े और जानवर हैं, जो उन पर लानत करते हैं, क्योंकि वे उन बदकार उलमा के गुनाहों की वजह से क़हत में मुबतला हो जाते हैं जो इल्म को छिपाते हैं। अज़-ज़ज्जाज ने कहा कि सही क़ौल यह है कि इससे मुराद फ़रिश्ते और मोमिन हैं। उनके मुताबिक यह कहना कि इससे मुराद ज़मीन के जानवर हैं, उसके लिए किसी नस या रिवायत का होना ज़रूरी है, जबकि उसकी ताईद में कोई वाज़ेह रिवायत नहीं मिलती। अलबत्ता बराअ बिन आज़िब से एक हदीस मरवी है जिसमें नबी ﷺ ने इस आयत के बारे में फ़रमाया कि इसमें ज़मीन के जानवर भी शामिल हैं। यह हदीस इब्र माजह ने मुहम्मद बिन अस-सब्बाह से, वे अम्मार बिन मुहम्मद से, वे अबू-ल-मिनहाल से, वे</p>

<p>from ‘Ammār ibn Muḥammad from Abū-l-Minhāl from Zādhān from al-Barā’. It has a good <i>isnād</i>.</p>	<p>ज़ाधान से और वे बराअ से रिवायत की है। इसकी संद अच्छी है।</p>
<p>If it is asked, ‘How can the plural reserved for things which have intelligence be used for creatures without intelligence?’ the reply is that it is because the action of intelligent beings is ascribed to them. An example of this is when Allah says in Sūrat Yūsuf: ‘I saw them [the stars] prostrating to me’ (12:4), using the masculine plural. There are many other instances of this and it is something which will be discussed later, Allah willing. Al-Barā’ and Ibn ‘Abbās said that the ‘cursers’ are all creatures except for men and jinn. That is because the Prophet ﷺ said, ‘When the unbeliever is struck in his grave and shouts out, everything hears him except for men and jinn. All who hear him curse him.’ Ibn Mas‘ūd and as-Suddī said, ‘It is a man</p>	<p>अगर यह पूछा जाए कि अक़ल रखने वाली मख़लूक़ के लिए मख़सूस ज़मअ का सिगा बे-अक़ल मख़लूक़ के लिए कैसे इस्तेमाल हो सकता है? तो इसका जवाब यह है कि इसलिए कि उनके अमल को अक़ल रखने वालों के अमल के तौर पर बयान किया गया है। इसकी मिसाल सूरह यूसुफ़ में अल्लाह तआला के इस फ़रमान में मिलती है: “मैंने उन्हें (सितारों को) देखा कि वे मुझे सज्दा कर रहे थे” (यूसुफ़ 12:4), जहाँ मुज़क्कर ज़मअ का सिगा इस्तेमाल हुआ है। इस तरह की और भी मिसालें हैं जिन पर आगे इंशा अल्लाह गुफ़्तगू होगी। बराअ और इब्न अब्बास ने कहा कि “लानत करने वाले” से मुराद तमाम मख़लूक़ हैं सिवाय इंसानों और जिन्नात के। इसकी वजह यह है कि नबी ﷺ ने फ़रमाया: “जब काफ़िर को उसकी क़ब्र में मारा जाता है और वह चीख़ता है तो उसकी आवाज़ को इंसानों और जिन्नात के सिवा हर चीज़ सुनती है, और जो भी उसे सुनता है वह उस पर लानत करता है।” इब्न मसऊद और</p>



<p>who curses his companion and the curse rises to heaven and then descends and does not find the person, about whom it was said, as meriting it and so it returns to the one who said it and does not find him to merit it either. Therefore, it becomes general and falls on the Jews who concealed what Allah revealed.'</p>	<p>सुदी ने कहा: "कभी ऐसा होता है कि एक आदमी अपने साथी पर लानत करता है, फिर वह लानत आसमान की तरफ़ चढ़ती है और फिर नीचे आती है, लेकिन जिसके बारे में कही गई हो उसे उसका मुस्तहिक़ नहीं पाती, फिर वह कहने वाले की तरफ़ लौटती है और उसे भी उसका मुस्तहिक़ नहीं पाती। फिर वह आम हो जाती है और उन यहूदियों पर पड़ती है जिन्होंने अल्लाह के नाज़िल किए हुए अहकाम को छिपाया था।"</p>
<p><b>except for those who sincerely repent and put things right and make things clear. I turn towards them. I am the Ever-Returning, the Most Merciful. [2:160]</b></p>	<p><b>सिवाय उन लोगों के जो सच्ची तौबा करें, इस्लाह करें और हक़ को वाज़ेह करें। मैं उनकी तरफ़ रुजू करता हूँ, और मैं बहुत तौबा क़बूल करने वाला, निहायत रहम करने वाला हूँ। [2:160]</b></p>
<p><b>except for those who sincerely repent</b></p>	<p><b>सिवाय उन लोगों के जो सच्ची तौबा करें</b></p>
<p>Those who sincerely repent are those who are righteous in their actions and do deeds which make their repentance clear. Simple repentance is not enough according to our scholars; it is necessary for the opposite of someone's original</p>	<p>जो लोग सच्ची तौबा करते हैं वे वही लोग हैं जो अपने आमाल में रास्तबाज़ हो जाते हैं और ऐसे काम करते हैं जिनसे उनकी तौबा वाज़ेह हो जाती है। हमारे उलमा के नज़दीक सिर्फ़ ज़बानी तौबा काफ़ी नहीं होती; बल्कि ज़रूरी है कि इंसान की पिछली</p>



<p>condition to be clearly manifest in him. If he was an apostate and then returns to Islam, he has to be manifestly obeying its laws. If he is one of the people of disobedience, he must become one of the people who perform righteous actions and avoid people immersed in corruption and his former life. If he is an idolater, he must shun the company of other idolaters and mix with the people of Islam. Repentance and its rulings will be explained in Sūrat an-Nisā', Allah willing.</p>	<p>हालत के बरअक्स उसकी नई हालत साफ़ तौर पर ज़ाहिर हो। अगर कोई शख्स मुरतद्द था और फिर इस्लाम की तरफ़ लौट आए तो उस पर लाज़िम है कि वह ज़ाहिर तौर पर इस्लाम के अहकाम की पैरवी करे। अगर वह नाफ़रमानी करने वालों में से था तो उसे नेक आमाल करने वालों में शामिल होना चाहिए और फ़साद में डूबे हुए लोगों और अपनी पिछली ज़िंदगी से किनारा कर लेना चाहिए। अगर वह मुशरिक था तो उसे मुशरिकों की सोहबत छोड़कर अहल-ए-इस्लाम के साथ रिश्ता रखना चाहिए। तौबा और उसके अहकाम की तफ़सील इंशा अल्लाह सूरह अन-निसा में बयान की जाएगी।</p>
<p><b>and put things right and make things clear.</b></p>	<p><b>और इस्लाह करें और हक़ को वाज़ेह करें।</b></p>
<p>Some scholars say that 'make things clear' means, for instance, by breaking wine containers and spilling out their contents and other clear actions connected with breaking with past patterns of behaviour. It is said that it means make clear what is in the Torah about the Prophethood of Muḥammad ﷺ</p>	<p>कुछ उलमा कहते हैं कि "हक़ को वाज़ेह करें" से मुराद यह है कि इंसान अपने पिछले अमल के ख़िलाफ़ वाज़ेह अमली क़दम उठाए, जैसे शराब के बर्तन तोड़ देना और उनका माद्दा बहा देना और इसी तरह के दूसरे आमाल जो पुरानी आदतों को छोड़ देने को ज़ाहिर करें। यह भी कहा गया है कि इससे मुराद यह है</p>

<p>and the obligation to follow him. It is better to take it in the more general sense of displaying the opposite of what people were doing previously. Allah knows best.</p>	<p>कि तौरात में रसूलुल्लाह ﷺ की नुबूवत और आपकी पैरवी के वुजूब को वाज़ेह कर दिया जाए। अलबत्ता बेहतर यह है कि इस आयत को आम मानी में लिया जाए, यानी यह कि इंसान अपनी पिछली रविश के बरअक्स अपना तरीका-ए-अमल ज़ाहिर करे और हक़ को वाज़ेह कर दे। और अल्लाह ही बेहतर जानता है।</p>
<p><b>But as for those who are unbelievers and die unbelievers, the curse of Allah is upon them and that of the angels and all mankind. [2:161]</b></p>	<p><b>लेकिन जो लोग कुफ़र करें और काफ़िर ही मर जाएँ, उन पर अल्लाह की लानत है और फ़रिश्तों और तमाम इंसानों की भी। [2:161]</b></p>
<p>Ibn al-‘Arabī said, ‘Many of my shaykhs told me that it is not permitted to curse a particular unbeliever because his state at the time of his death is not known. Allah Almighty stipulated in this āyah that the application of the curse depends on someone actually dying as an unbeliever. As for what is related about the Prophet ﷺ cursing specific unbelievers, that was only</p>	<p>इब्र अल-अरबी ने कहा: “मेरे बहुत से उस्तादों ने मुझे बताया कि किसी ख़ास काफ़िर पर लानत करना जायज़ नहीं, क्योंकि उसके मरने के वक़्त की हालत मालूम नहीं होती। अल्लाह तआला ने इस आयत में यह शर्त रखी है कि लानत का इतलाक़ उसी पर होगा जो हक़ीक़त में कुफ़र की हालत में मरे। जहाँ तक उन रिवायतों का ताल्लुक़ है जिनमें नबी ﷺ ने कुछ मख़सूस काफ़िरों पर लानत की, तो वह इसलिए था कि</p>

<p>because he knew what their fate would be.’ Ibn al-‘Arabī also said, ‘I consider it valid, however, to curse an unbeliever on the basis of his outward state and it is permitted to fight and kill him. It is related that the Prophet ﷺ said, “O Allah, ‘Amr ibn al-‘Āṣ has satirised me and he knows that I am not a poet, so curse him and satirise him to the extent that he has satirised me.” So he cursed him, even though faith, the dīn and Islam were to be his end. He was fair when he said, “To the extent that he has satirised me,” and no more.’</p>	<p>आपको उनके अंजाम का इल्म था।” इब्न अल-अरबी ने आगे कहा: “लेकिन मेरे नज़दीक यह सही है कि किसी काफ़िर को उसकी ज़ाहिरी हालत की बुनियाद पर मलऊन कहा जाए, और उससे क़िताल करना और उसे क़त्ल करना भी जायज़ है। रिवायत है कि नबी ﷺ ने फ़रमाया: ‘ऐ अल्लाह! अम्र बिन अल-आस ने मेरी हिज्व की है, हालाँकि वह जानता है कि मैं शायर नहीं हूँ, इसलिए उसे उतनी ही लानत कर और उतनी ही उसकी हिज्व कर जितनी उसने मेरी हिज्व की है।’ चुनाँचे आपने ﷺ उस पर लानत की, हालाँकि आख़िरकार उसका अंजाम ईमान, दीन और इस्लाम पर हुआ। आपने ﷺ इंसाफ़ किया जब फ़रमाया: ‘उतनी ही जितनी उसने मेरी हिज्व की है’ और उससे ज़्यादा नहीं।”</p>
<p>As for cursing unbelievers in general, without specifying anyone, there is no disagreement about doing that, since Mālik reported with an <i>isnād</i> going back to al-A‘raj who said, ‘People definitely used to curse the unbelievers in Ramaḍān.’ Our scholars add,</p>	<p>जहाँ तक आम तौर पर काफ़िरों पर लानत करने का ताल्लुक़ है—बिना किसी ख़ास शख़्स का नाम लिए—तो उसके जावाज़ में कोई इख़्तिलाफ़ नहीं। क्योंकि इमाम मालिक ने एक सनद के साथ अल-अराज से रिवायत किया है कि उन्होंने कहा: “लोग रमज़ान में काफ़िरों पर ज़रूर</p>

<p>‘Whether or not they are <i>dhimmīs</i>.’ This is not mandatory but it is permitted if someone does it, because they deny the truth and are hostile towards the <i>dīn</i> and its people. The same applies to anyone who commits acts of disobedience openly, like drinking wine and practising usury and other such things.</p>	<p>लानत किया करते थे।” हमारे उलमा ने इसमें इज़ाफ़ा किया है: “चाहे वे ज़िम्मी ही क्यों न हों।” यह अमल वाजिब नहीं है, लेकिन अगर कोई ऐसा करे तो जायज़ है, क्योंकि वे हक़ का इनकार करते हैं और दीन और अहल-ए-दीन के साथ दुश्मनी रखते हैं। इसी तरह यह हुक्म उस शख्स पर भी लागू होता है जो खुले आम नाफ़रमानी के काम करे, जैसे शराब पीना, सूद लेना-देना और इसी तरह के दूसरे आमाल।</p>
<p>The point of cursing an unbeliever is not to drive him away from disbelief. It is repayment for his disbelief and his display of it. Some of the Salaf said, ‘There is no point in cursing those who are mad or dead among them, either by way of repayment or as a rebuke. It has no effect.’</p>	<p>किसी काफ़िर पर लानत करने का मक़सद यह नहीं होता कि उसे कुफ़्र से दूर कर दिया जाए, बल्कि यह उसके कुफ़्र और उसके इज़हार के बदले में एक जवाब होता है। कुछ सलफ़ ने कहा: “उनमें से जो लोग दीवाने हो गए हों या मर चुके हों, उन पर लानत करने का भी कोई फ़ायदा नहीं—न बदले के तौर पर और न सरज़निश के तौर पर—क्योंकि इसका कोई असर नहीं होता।”</p>
<p>What is meant by the <i>āyah</i>, according to this understanding, is that people will curse them on the Day of Rising so that it has an effect</p>	<p>इस समझ के मुताबिक़ आयत का मतलब यह है कि क्रियामत के दिन लोग उन पर लानत करेंगे, ताकि उसका असर हो और वह उनके दिलों को तकलीफ़ और अज़ीयत</p>

<p>and harms and pains their hearts. That is the repayment for their disbelief as the Almighty says: ‘Then on the Day of Rising, they will reject one another and curse one another.’ (29:25) This position inclines to the view that the <i>āyah</i> is a simple report from Allah and not a command.</p>	<p>पहुँचाए। यह उनके कुफ़्र का बदला होगा, जैसा कि अल्लाह तआला फ़रमाता है: “फिर क्रियामत के दिन वे एक-दूसरे का इनकार करेंगे और एक-दूसरे पर लानत करेंगे।” (अल-अनकबूत 29:25) यह मौक़िफ़ इस राय की तरफ़ माइल है कि यह आयत अल्लाह की तरफ़ से एक ख़बर है, न कि कोई हुक्म।</p>
<p>Ibn al-‘Arabī mentioned that it is not permitted to curse an individual rebel, because it is reported that a man who had drunk wine several times was brought before the Prophet and one of those present said, ‘Allah curse him! How often he is brought!’ The Prophet ﷺ said, ‘Do not help Shayṭān against your brother,’ and he called him a brother, which obliges compassion for him. This is a sound <i>ḥadīth</i>. Al-Bukhārī and Muslim mentioned it.</p>	<p>इब्र अल-अरबी ने ज़िक्र किया है कि किसी मुअय्यन गुनहगार शख्स पर लानत करना जायज़ नहीं। इसकी दलील यह है कि रिवायत में आता है कि एक शख्स, जिसने कई बार शराब पी थी, नबी ﷺ के सामने लाया गया। वहाँ मौजूद लोगों में से एक ने कहा: “अल्लाह इस पर लानत करे! इसे कितनी बार लाया जाता है!” तो नबी ﷺ ने फ़रमाया: “अपने भाई के खिलाफ़ शैतान की मदद न करो।” आपने ﷺ उसे “भाई” कहा, और यह बात उस पर रहम और शफ़क़त करने को ज़रूरी ठहराती है। यह सहीह हदीस है, जिसे इमाम बुख़ारी और इमाम मुस्लिम ने रिवायत किया है।</p>
<p>It is, however, permitted to curse someone on whom the</p>	<p>अलबत्ता उस शख्स पर लानत करना जायज़ है जिस पर हद की सज़ा लागू</p>

<p><i>ḥadd</i> punishment has not been carried out, whether he is named and specific or not, because the Prophet ﷺ only cursed those for whom the curse was obliged as long as they remained in that state which obliged the curse. If someone repents of it, refrains and is purified by the <i>ḥadd</i>, then he should not be cursed. This is made evident by the words of the Prophet ﷺ: ‘When one of your slave-girls fornicates, carry out the <i>ḥadd</i> on her and do not find fault her.’ This <i>ḥadīth</i>, being sound, indicates that finding fault and cursing are before the <i>ḥadd</i> and before repentance. Allah knows best.</p>	<p>नहीं हुई हो, चाहे उसका नाम लेकर किया जाए या आम तौर पर। इसकी वजह यह है कि नबी ﷺ ने सिर्फ़ उन्हीं लोगों पर लानत की जिन पर लानत उस वक़्त तक लाज़िम थी जब तक वे उस हालत में बाक़ी रहें जो लानत का सबब बनती है। लेकिन अगर कोई शख्स तौबा कर ले, उस गुनाह से रुक जाए और हद की सज़ा के ज़रिये पाक हो जाए, तो फिर उस पर लानत नहीं करनी चाहिए। इस बात की ताईद नबी ﷺ के इस फ़रमान से होती है: “जब तुम्हारी लौंडी ज़िना करे तो उस पर हद जारी करो और फिर उसे मलामत न करो।” यह सहीह हदीस इस बात की तरफ़ इशारा करती है कि मलामत और लानत हद के नफ़ाज़ और तौबा से पहले तक होती है। और अल्लाह ही बेहतर जानता है।</p>
<p>Ibn al-‘Arabī said, ‘It is permitted to curse rebels in general by consensus, based on what is related from the Prophet ﷺ, that he said: “Allah has cursed a slave who steals a helmet and has his hand cut off.”’</p>	<p>इब्न अल-अरबी ने कहा: “इज्माई तौर पर बागियों (या नाफ़रमान लोगों) पर आम तौर पर लानत करना जायज़ है, इस हदीस की बुनियाद पर जो नबी ﷺ से रिवायत है कि आपने फ़रमाया: ‘अल्लाह उस बंदे पर लानत करे जो एक हेलमेट चुराता है और उसका हाथ काट दिया जाता है।”</p>

<p>Cursed people are far from Allah's mercy. The root meaning of <i>la'n</i> (curse) is to drive away and put someone far away. The intent of a curse made by people is to drive someone away, and Allah's curse is punishment.</p>	<p>मलऊन लोग अल्लाह की रहमत से दूर होते हैं। शब्द "लानत" (लानत) के असली मानी किसी को धुत्कार कर दूर कर देना और अलग कर देना हैं। लोगों की तरफ़ से की जाने वाली लानत का मक़सद किसी को दूर करना होता है, जबकि अल्लाह की लानत दरअसल सज़ा होती है।</p>
<p>If it is observed that not all mankind curse them because their own people do not, there are three answers to this objection. One is that the curse of most people is applied to them, since it denotes the majority. The second is what as-Suddī said: that everyone curses a wrongdoer and a wrongdoing unbeliever even curses himself. The third is Abū-l-‘Āliyah's statement that what is meant is the Day of Rising when his own people will curse him along with everyone else as Allah says: 'But then on the Day of Rising you will reject one another and curse one another.' (29:25) 'For ever' refers to the curse: either in respect of the</p>	<p>अगर यह कहा जाए कि तमाम इंसान उन पर लानत नहीं करते, क्योंकि उनके अपने लोग तो ऐसा नहीं करते, तो इस एतराज़ के तीन जवाब हैं। एक जवाब यह है कि इससे अक्सर लोगों की लानत मुराद है, क्योंकि यह शब्द अकसरियत को ज़ाहिर करता है। दूसरा जवाब वह है जो सुदी ने कहा कि हर शख्स ज़ालिम को लानत करता है, और गुनहगार काफ़िर तो खुद अपने आप पर भी लानत करता है। तीसरा जवाब अबू-ल-आलियह का क़ौल है कि इससे मुराद क्रियामत का दिन है, जब उसके अपने लोग भी दूसरों के साथ मिलकर उस पर लानत करेंगे, जैसा कि अल्लाह तआला फ़रमाता है: "फिर क्रियामत के दिन तुम एक-दूसरे का इनकार करोगे और एक-दूसरे पर लानत करोगे।" (अल-अंकबूत 29:25)</p>



<p>repayment for it or in respect of its abiding on them for ever. The punishment will not be lightened for them for a single moment.</p>	<p>“हमेशा के लिए” से मुराद लानत का दवाम है: या तो उसके बदले के तौर पर, या इस मानी में कि वह हमेशा उन पर क़ायम रहेगी। और उनके अज़ाब में एक लम्हे के लिए भी कमी नहीं की जाएगी।</p>
<p><b>They will be under it for ever. The punishment will not be lightened for them. They will be granted no reprieve. [2:162]</b></p>	<p><b>वे उसके नीचे हमेशा रहेंगे। उनके अज़ाब में कोई कमी नहीं की जाएगी और न ही उन्हें मोहलत दी जाएगी। [2:162]</b></p>

